कुल्ली भाट

कुल्ली भाट

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

इस पुस्तिका के समपण के योग्य काई व्यक्ति हि दी-साहित्य मे
नही मिला यद्यपि कुल्ली के गुण बहुता मे है, पर गुण के
प्रकाश म सब घबराय। इसलिए समपण स्थगित रखता हू।

प० पथवारीदीनजी भट्ट (कुल्ली भाट) मेरे मित्र थे। उनका परिचय इस पुस्तिका म है। उनके परिचय के साथ मेरा अपना चरित भी आया है, और कदाचित अधिक विस्तार पा गया है। रूढिवादिया के लिए यह दोष है, पर साहित्यिका के लिए, विशेषता मिलने पर, गुण होगा। मैं केवल गुण ग्राहका का भक्त हूँ।

कुल्ली सबसे पहले मनुष्य थे, ऐसे मनुष्य, जिनका मनुष्य की दृष्टि मे बराबर आदर रहेगा। सरस्वती सम्पादक प० देवीदत्तजी शुक्ल ने, पूछने पर, कहा, कुल्ली मेरे बडे भाई के मित्र थे। अस्तु, जहाँ शुक्लजी की मित्रता का उल्लेख है, वहा पाठक समझने की कृपा करें कि कुल्ली शुक्लजी के मित्र नही बडे भाई जैसे थे।

पुस्तिका म हास्य रस की प्रधानता है, इसलिए कोई नाराज होकर अपनी कमजोरी न साबित करें, उनसे प्राथना है।

लखनऊ — 'निराला'

१० । ५ । ३९

दो शब्द,

प्रस्तुत पुस्तक नवीन साज-सज्जा के साथ पुनर्मुद्रित होकर निकल सकी, इसका श्रेय श्रीमती शीलाजी सन्धू, सञ्चालिका 'राजकमल-प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नयी दिल्ली को है, जिन्होंने पुस्तक को आधुनिकता का रंग-रूप देकर छापने में अपनी सुरुचि का परिचय दिया है। मैं उनके इस स्नेहपूर्ण सहयोग के प्रति आभार मानता हूँ।

विमोचित एवं पुनर्मुद्रित पुस्तक का नव संस्करण हिन्दी के सुयोग्य पाठकों को सहर्ष समर्पित करते हुए आशा करता हूँ कि वे 'निराला' की कृतियों को जिस रुचि और आदर भाव से अपनाते रहे हैं, इसे भी अपनायेंगे।

रामकृष्ण त्रिपाठी
आत्मज,
महाकवि 'निराला'

२६५, छोटी बासुकि,
दारागंज,
प्रयाग।
२-११-७८

एक

बहुत दिना की इच्छा—एक जीवन-चरित लिखू अभी तक पूरी नही हुइ, चरितनायक नही मिल रहा था, ठीक जिसके चरित म नायकत्व प्रधान हो। बहुत आग-पीछे दायें-बायें देखा। कितने जीवन चरित पढे, सबम जीवन से चरित ज्यादा भारत के कई महापुरुषा के पढे—स्वहस्त-लिखित, भारत पराधीन है, चरित बोलत है। बहुत दिना की समझ—सत्य कमजोरी है, मुहजोरी उसकी प्रतिक्रिया, अगर चरित्र मे अँधेरा छिपा, प्रकाश आखा म चकाचौंध पैदा करता है, जो किसी तरह भी देखना नही—जड पकड गयी।

याद आया, कही पढा था—बम्बई के सिनेमा स्टारा की सर से दीवार चढने की करामात देखकर—रँगे हृदय म आये—सत्य म अज्ञ—बाहर के किसी प्रेमी कायकता ने कमर तोड ली है। बडी खुशी हुई। साफ देखा—कलम हाथ लेते ही कितने कविया की आग की परी विश्व-साहित्य के सातवें आसमान पर पर मारती ह कितने कमवीर दलिया खान हुए कमर कमान किये, जान पर खेल रह ह, कितने आधुनिक बेधडक समाजवाद के नाम से पूरे उत्तानपाद।

इसी समय तुलसीदास की याद आयी, जि हान लिखा है—

"जो अपने अवगुन सब कहऊँ, बाढ कथा, पार ना लहऊँ,

ताते मैं अति अलप बखान, थोरे महँ जानिहैं सयाने।'

सोचा, तुलसीदास ने सिफ सयाना की आख फैलायी है, यानी महा-

पुरुषो की नही। वह स्वय भी महापुरुष नही थे, आधुनिक विद्वानो का मत है। कहते है जवाना के श्रीगणेश स, यानी अच्छी तरह होश आने मे, उम्र के सौ साल बाद—अच्छी तरह होश जाने तक उनमे पुरुषत्व ही प्रधान रहा।

मुझम कवि भगवतीचरण कहते थे—कविवर रामनरश त्रिपाठी जानत है बहुत आधुनिक रिसच है—तुलसीदासजी गर्मी से मर थे, यह पता नही चला—गर्मी रत्नावली से मिली—कहा मे, *बाहुक* की रचना के वक्त बाहु का दद गर्मी के कारण हुआ। कुछ हो, मै एतिहासिक नही, समभा कि तुलसीदासजी पुरुष थे महापुरुष नही, महापुरुष अकबर था—दीन ए इलाही चलाया, हर कौम की बेटी व्याही, चेले बनाये।

अपने राम के लकडदादा के लकडदादा के लकडदादा राजा बीरबल त्रिपाठी अकबर के चेले थे, अपनी बेटी खाल के वाजपेयियो के घर व्याही, तब स वाजपयी वश म भी महापुरुषत्व का असर है यो ट्रिपल लकडदादा का प्रभाव कुल कनउजिया कुलीना पर पडा। खैर, 'महापुरुष' 'पुरुष का बडा हुआ रगा हिस्सा लेकर है उसी तरह उसके चरित्र म एक मत और जुड गया है। साहित्यिक की निगाह म यह साबुन का उपयोगितावाद है, अर्थात् सिफ साफ होता है वह भी कपडा, रास्ता, घर या दिमाग नही। अगर वाद लें जस समाजवाद पैर बढाये ह, ता वह भी अकेला साहित्य नही ठहरता। साहित्य पुरुष का एक रोयाँ सिद्ध हाता है।

मैं तलाश म था कि एसा जीवन मिले, जिससे पाठक चरिताथ हो, इसी समय कुल्ली भाट मरे।

दो

जीवन चरित जस आदमियो के बन और बिगड, कुल्ली भाट ऐस आदमी न थ। उनके जीवन का महत्त्व समझे एसा अब तक एक ही पुरुष ससार म आया है पर दुभाग्य स अब वह ससार म रहा नही—गोर्की। पर गोर्की म भी एक कमजोरी थी, वह जीवन की मुद्रा को जितना दखता

था, खास जीवन का नही। वादी विवादी था। हिन्दी म कोई है हिन्दी भाषी ? किसी महापुरुष की जबान मे कहा जा सकता है—'नहीं'।

मैं हिन्दी के पाठको को भरसक चरितार्थ करूँगा, पर कुल्ली भाट के भूगोल मे केवल ज़िला रायबरेली था स्थल, बाकी जल। एक बार लाचारी उम्र अयोध्या तक गये, जैसे किसी टापू मे यान, रल। या ज़िन्दगी-भर अपने वतन डलमऊ मे रह। लेकिन, ज़िन्दगी के बाद—जितना जानता हूँ नाम मात्र म लकर पूरे परिचय तक—उनस नही छूट। गडही के किनारे कबीर का महासागर कैसे दिखा, मैं समझा।

बडा आदमी कुल्ली को काई नही मिला, जिस मित्र समझकर गदन उठाते, एक 'सरस्वती सम्पादक' प० देवीदत्त शुक्ल को छोडकर, लकिन शुक्लजी का बडप्पन जब उन्ह मालूम हुआ, तब मरने के छ महीने रह गये थे, मुझी स सुना था।

सुनकर गदन उठायी थी, सास भरी थी, और कहा था, "वह मेरे लँगोटिया यार हैं। हम मदरसे म साथ पढे हैं।"

मुझे हँसता देख फिर छोटे पडे, पूछा, "देवीदत्त बडे आदमी ह ?"

मैंने कहा, "आपको मदरसे की याद आ रही है। जिस पत्रिका के आचाय प० महावीरप्रसादजी द्विवेदी सम्पादक थे, उसके अब शुक्लजी हैं।"

न जाने क्या, कुल्ली को फिर भी विश्वास न हुआ। म सोच रहा था या तो कुल्ली मदरस म शुक्लजी स तगडे पडते थे, या—याद आया, शुक्लजी को बसवाडे के कवि कण्ठाग्र हैं कुल्ली की दोस्ती के कारण। कुल्ली गुरु-स्थान पर है। मुझे भी उन्होंने कुली (एक दाव) पर चढाया था, नरहरि, हरिनाथ, ठाकुर, भुवन आदि—मालूम नहीं—कितने कवि गिनाये थे अपने वश के। मुमकिन है, इसलिए भी कि धाक जमाने मे मुझे कामयाबी न होगी, यह मैं बीस साल से जानता हू। अलावा मरी दृष्टि का अप्रतिष्ठा दोष कर दें। पर कुल्ली को मालूम न था कि मैं कविता तो लिखता हू, पर कवि दूसरे को मानता हूँ। कुल्ली की शुक्लजी के प्रति हुई मनोदशा देखकर मैंने कहा, "जब आप मुझे इतना तब शुक्लजी तो मैं तो उनके चरणो तक ही पहुचता हूँ।'

सुनकर कुल्ली बहुत खुश हुए, जस स्वय गुक्लजी हो, बडप्पन आ गया, स्नेह की दृष्टि स देखत हुए बोले, "हा, करते की विद्या है, जब आप गौन के साल आये थे क्या थे ?" कहकर कुछ झेंप। झेंपने के साथ उनके मनोभाव कुल हाल बेतार के तार स मुझ समझा गय। पच्चीस साल पहले की घटना जो उस समय समझ म न आयी थी, पल-मात्र म आ गयी। सारे चित्र घूम गये, और उनका रहस्य समझा। वही कुल्ली से पहली मुलाकात है, वही से श्रीगणेश करता हूँ।

तीन

मैंन सोलहवाँ साल पार किया, पूरा जीवन जी० पी० श्रीवास्तव के कथनानुमार। जी० पी० श्रीवास्तव ही नही, जितने गाव घर टोला पडोस के थे, यही कहते थे।

याद है, एक दिन प० रामगुलाम न पिताजी से कहा था, "लडके का कण्ठ फूट आया बगलें निकल आयी मसें भीगने लगी अब बबुआ नही है गौना कर दो हो भी तो हाथी गया है लडता है, सुनत हैं।'

'हा।' कहकर पिताजी चिन्ता मग्न हो गये थे।

इसी तरह, जब गौना तय गये, श्रीमतीजी तरहवा पार कर चुकी थी—कुछ दिन हुए थ, उनकी किसी नानी न कहा था उनकी अम्मा से—मैं वही था—हम दोना की गाठ जोडकर कौन एक पूजा की जा रही थी—मदनदव की अवश्य नही थी। उन्होन कहा था, "दामाद जवान बिटिया जवान, परदेश ले जाते ह, तो ले जान दो।'

गौना हुआ। बडी बिपत। गाव म प्लेग। लोग बागो म पडे। हमारा एक बाग गाँव के करीब है। प्लेग का अड्डा होना है—लोग वहा झापडे डालत हैं। हम लोग बगाल स आये, उसी दिन लोग निकलन लग। आखिर एक महुए के नीचे दो झापडे डलवाकर पिताजी मुझे और कुछ भैयाचार नातेदारो को लेकर गौना लेन चले।

जेठ के दिन। इसस पहले यू० पी० की लू नहीं खायी थी। खर,

गौना हुआ, और एक भापडे म एक रात हम लोग बद किये गय । जो वातें नही सोची थी, श्रीमतीजी के स्पश मात्र से वे मस्तिष्क म आन लगी । प्रौढ़ता के अन्त तक उनम अधिक प्रौढ बातें नही आती, मैं नव-युवका को विश्वास दिलाता हू । खर, हम पूरे जवान हैं, हम दोना समझे ।

पाचवें दिन ससुरजी विदा कराने आये । ससुरजी इसलिए भी आये कि गाव का पानी नही पियेंग, शाम तक विदा करा ले जायेंग । पिताजी का बहुत बुरा लगा । वह बगाल म उतना रुपया सच करके आये थे । पाच दिन के लिए नही । ससुरजी सुबह की गाडी स आये थ । मैं रात का जगा, सो रहा था । बातचीत नही सुनी, बाद का गाव के एक भैया स सुनी । मेरी जब आख खुली, तब ससुरजी अपनी लडकी को विदा कराके ले गय थे । सुना, प्लग के भय स वह लडकी को विदा करान आय थे ।

पिताजी न इस पर बहुत फटकारा, कहा, "यह भय हमारे लडके के लिए आपका नही हुआ ? अगर ऐस आपके मनोभाव हैं, तो हम दूसरा विवाह कर लेंगे ।

पिताजी का तक पूण कथन का, मुमकिन ससुरजी पर प्रभाव पडता, लेकिन ससुरजी थ बहरे । वह अपनी कहत थे, और देख रह थे कि विदाई की तयारी हो रही है या नही । उधर ससुरजी की पुत्री अपन पिता और ससुर के कथोपकथन को एकनिष्ठ होकर सुन रही थी । पिताजी पुत्र की दूसरी शादी कर लेंगे, प्रभाव अनुमेय ह । झल्लाहट म पिताजी ने विदा कर दिया, और स्टेशन पहुचा दने को बहल बुला दी ।

दूसर दिन नाई आया सासुजी की लम्बी चिट्ठी लेकर । क्षमा' शब्द का अतिशय प्रयोग । ससुरजी कम सुनते हैं, आज्ञा पालन म त्रुटि हुई । बुलाया । गवही' पहले नही ली, अब ल लें । बडी दीनता ! यह भी लिखा था, ' मेरी दो दाँत की लडकी, उसके सामन दूसरे विवाह की बात ।"

पिताजी पिघले, मुझसे बोले, 'ससुरार जाव लेकिन यहा से तिगुना खाना ।"

मैंने कहा, "घी और बादाम तिगुने करा लूगा। ठदाना तो वहा मिलते नही, अन्यथा शरबत मे तीन रुपये लग जाते रोज़।'

पिताजी ने कहा, 'रुह रुह की मालिश करना रोज़, हाथ दुरुस्त हो जायँगे !"

शाम चार बजेवाली गाड़ी से चलने की तैयारी हो गयी। दुपहर ढलते नौकर बिस्तर बाक्स लेकर भेज दिया गया। मैं पिताजी के उपदेश धारण कर ढाई बजे के करीब रवाना हुआ। ठाट बगाली, धोती, शर्ट, जूता छाता। आँख मे भी बगाल का पानी बाकी देश जगल या रेगिस्तान दिखते थे।

बगालियों की तरह मैं भी मानता था, आय बगाल पहुचकर सही मानी म सभ्य हुए विशेषत अँगरेजो के आने के बाद स। महुए की छाह और तर किये झापडे के अन्दर यू० पी० की गर्मी का हिसाब न लगता था। बाहर खाई पार करते ही लू का एसा झोका आया कि एक साथ कुण्डलिनी जैसे जग गयी, जैसे वर पुत्र पर पडी सरस्वती की कृपा दृष्टि की तारीफ म रवि बाबू ने लिखा है—

"एके बारे सकल पर्दे घचिए दाओ तार।'

(एक साथ ही उसके कुल पर्दे हटा देती हो।)

वह प्रकाश दिखा कि मोह दूर हो गया। लेकिन व्यक्ति भेद है, रविबाबू को आराम-कुर्सी पर दिखा, हजरत मूसा को पहाड पर मुझे गलियारे मे। लू विरोध करती हुई कह रही थी, "अब ज्ञान हो गया है घर लौट जाओ।

फिर भी पैर पीछे नही पडे, बगाल की वीरता और प्रेमाशक्ति बैक कर रही थी। पर उठाकर सामने रखते ही, लीक के खडढ म डेढ हाथ खाल गया, और मैं गुडीगुडता के डण्डे की तरह गुडा, लकिन स्पोटस् मन था झडबेर की झाडी तक पहुचते पहुचते अड गया। देह गदबद हो गयी। मुह मे नीम लग गया था घाव पर जसे आयडाफाम पडा।

लकिन धन्यवाद है सूरदास का मुझे लज्जित होने स बचा लिया कलकत्ते से बिल्वमगल-नाटक देखकर आया था—दूसरी जीवनिया भी पढी थी लाश पकडकर नदी पार करने और साँप की पूछ पकडकर

मजिल चढने के मुकाबले यह अति तुच्छ था, फिर वहा वेश्या, यहाँ धमपत्नी। आगे बढा। एक झाका और आया, मालूम हुआ इस दश मे धूप से हवा मे गर्मी ज्यादा है। फिर भी हवा के प्रतिकूल चलना ही होगा। कालिदास को पढ रहा था, याद आया—"अजयदेवरथ। म मोदिनीम", कडाई से पैर आग बढाया, ठकारा जूते न काकर स धोके से ठोकर ली, और मुह फैला दिया। सोचा, बॉक्स मे एक जोडा और है नया। तसल्ली हुई, फिर आगे बढा। एक झोका और आया। अबके छाता उलटकर दूसरी तरफ तना। हवा के रुख पर करके, सुधारकर ताड लिया।

आगे लोन-नदी आयी, जो आठ महीन सूखी रहती है, और जिसक किनारे ससार के आधे बेर बबूल है, शायद इसी कारण इस प्रात का नाम कभी बनौधा था—"बारह कुवर बनौधे केर।" स्वतन्त्रता प्रेम भी अधिक था, क्योंकि छोटी-सी जगह म बारह कुवर थे। धोती काछेदार बगाली पहनी थी। एक जगह उडी, और नर की बाहा स आलिगन किया, न अब छोडे, न तब—'गुला स खार बहतर हैं, जा दामन थाम लेते हैं" याद तो आया, पर बडा गुस्सा लगा। सैकडा काँटे चुभे हुए। धोती छप्पनछुरी हो रही थी। छुडाते नही बनता था। दर हो रही थी। आखिर मुट्ठी से कोछे को पकडकर खीचा। धोती मे सहस्र-धार गगा बन गयी, उधर बेर सहस्र विजय ध्वज।

धोती कीमती थी,—शान्तिपुरी, खास ससुराल के लिए ली गयी थी, जैसे प्रसिद्ध लेखक खास पत्र के लिए लेख लिखते हैं। सान्त्वना हुई कि कई और हैं। नदी गम स ऊपर आया। कुछ दूर पर बहटा-श्मशान मिला। दो ही मील पर देखा दुदशा हो गयी है, जसे धूल का समन्दर नहाकर निकला हू। स्टेशन मील-भर रह गया था गाडी का धराटा सुन पडा। अपने आप पैर दौडन लगे। मन ने बहुत कहा, बडी अभद्रता है। लेकिन जसे पैर क भी जबान लग गयी हो, बोले—"अभी भद्रता कुछ बाकी भी रह गयी है? घर लौटकर जाओगे, जिन्दगी-भर गाववाले हसेंगे—बाबू बनकर ससुराल चले थे। हजार हजार सपाट का न्ठान तो देखो।' कहते पैर बेतहाशा उठ रहे थे। छाता बगल म। हाथ म जूते। सामने मील भर का ऊसर।

चार बजे की चटकती धूप। स्टेशन देख पडने लगा। गाडी प्लेटफाम पर आ गयी। दौड तेज हुई। लम्बा मैदान। गाडी पानी ले रही है। अभी छ फर्लांग और है। भूमुल म पैर जले जा रहे है लेकिन रफ्तार धीमी नही बनायी भी नहा जा सकती, कलेजा मुह को आता हुआ। एंजिन पानी ले चुका, लौट रहा है, अभी चार फर्लांग है और तेज हो—नही हो सकत। बदन लत्ता। जान पडता है, गिर जाऊँगा।

इसी समय नौकर चन्द्रिकाप्रसाद ठोढी उठाकर रास्ते की तरफ देखता हुआ देख पडा। चन्द्रिका के दूध के दाँत उखडने के बाद सामने के आनवाले नही जमे, इसलिए लोग 'सिपुला' कहत हैं। हैरान होकर असम्बद्ध होठा से—ठोढी उठाये, एकदृष्टि—प्रतीक्षा करत दखकर मुझे नयी जान मिली, देखकर चन्द्रिका भी सजीव हुआ। टिकट कटा लिय थ, गनीमत हुई। मैं पहुचा। चन्द्रिका हँसा, फिर सामान चढाने लगा। स्टेशन मे एक प्लेटफाम है उस तरफ उसस गाडी लगी हुई, मुझे न आता देख चन्द्रिका उतरकर इधर चला आया था। इधर स ही चढे। भीतर जाने के साथ इतनी गर्मी मालूम दी कि जान पर आ बनी। चन्द्रिका न हाता, तो न जाने क्या होता। वह अँगोछे मे हवा करने लगा। कुछ देर म होश दुरुस्त हुए। गाडी चली। ठण्डे होकर कपडे बदले।

पाचवा स्टेशन डलमऊ है। उतरा तब सूरज छिप चुका था। लेकिन इतना उजाला कि अच्छी तरह मुह दिखे। चन्द्रिका न सामान उठाया। चल। गेट पर टिकट कलक्टर के पास एक आदमी खडा था बना चुना, बिलकुल लखनऊ ठाट, जिस बगाली दखत ही गुण्डा कहगा। तेल से जुल्फें तर, जैस अमीनाबाद मे सिर पर मालिश कराकर आया है। लखनऊ की दुपलिया टापी गोट तल स गीली, सिर के दाहिने किनारे रक्खी। ऐंठी मूछें। दाढी चिकनी। चिकन का कुता। उपर वास्कट। हाथ म बेंत। काली मखमली किनारी की कलकतिया धानी देहाती पहलवानी फशन स पहना हुइ। परा मे मेरठी जूते। उम्र पच्चीस के साल दो साल इधर उधर। दखने पर अन्दाजा लगाना मुश्किल ह—हिन्दू है या मुसलमान। साँवला रग। मझे का डीलडौल। साधारण निगाह म तगडा और लम्बा भी।

टिकट देकर निकलते ही मुझसे पूछा, 'कहा जाइएगा ?'

मैंने कहा, 'शेरअन्दाजपुर।'

"आइए, हमारा एक्का है," कहकर उसने एक्केवान को पुकारा, और गौर स घूरत हुए पूछा, 'किनके यहाँ ?'

मैंने अपने ससुरजी का नाम लिया। उसे एक बार देखकर दोबारा नही देखा, कारण वह मेरा आदश नही था, मुझस दो इच छोटा था और बदन म भी हल्का।

मैं एक्केवाले के साथ एक्के पर बठा। चन्द्रिका भी था। वह जवान कुछ देर तक पैसजर दखता रहा, फिर उसी एक्के पर आकर बैठा। चुपचाप बैठा देखता रहा। तब मैं नही समझ सका, अब जानता हू—वैसी शुभ दष्टि सुन्दरी मे सु दरी पर पडती है, जिसकी बाट का पानी रत्ती भर नही घटा।

चन्द्रिका बवकूफ की तरह उसे, विश्वास की दष्टि मे मुझे रह रहकर देख लेता था। उस मनुष्य ने मुझसे कोई प्रश्न नही किया, केवल अपने भाव मे था। मुझे बोलने की कोई आवश्यकता न थी। एक्का चला, कस्बे मे आकर मरे ससुरजी के दरवाजे खडा हुआ। वह आदमी चौराहे पर उतर गया था। उतरत एक्केवाले से कुछ कहा था, मैंने सुना नही।

जब मैं किराया देने लगा, एक्केवाले न कहा, 'नम्बरदार ने मना किया ह।"

"हम किसी नम्बरदार को नही जानते, किराया लेना होगा, पहले कह दिया होता।'

एक्केवाले न हाथ तो बढाया, लेकिन कहा, 'भया, उन्हें मालूम होगा, तो मरी नौकरी न रहगी।"

मैं समझ गया, पैस जेब म रक्खेगा। अब ससुराल के लोग आ गये। मैं प्रणाम नमस्कारादि के लिए तैयार हुआ।

तारे निकल आये थ। भावावेश मे उसने मुझसे पूछा, "अच्छा, बाबा, आसमान मे तारे ज्यादा है या दुनिया मे आदमी?'

मैंने कहा, तुझे क्या जान पडता है?"

चन्द्रिका कुछ सोच विचारकर हँसा। कहा, "दुनिया आसमान से छोटी थोडे ही है? कहा से कहा तक है! आदमी ज्यादा होग।"

इसी समय सासुजी शरबत लेकर आयी। उनका नौकर बाहर गया था। आया। सासुजी ने उससे पानी ले आने के लिए कहा। मैंने देखा, सासुजी का चेहरा प्रकाश को भी प्रसन्न कर रहा है। उनकी आत्मजा जैसे उनकी आत्मा म प्रविष्ट हो क्षण मात्र मे उनकी शका निवृत्त कर चुकी है, परिष्कृत स्नेह के स्वर से कहा, "बच्चा, शरबत पी लो।'

मैंने शरबत पिया। सासुजी न इस बार भी एक सास छोडी, जो मुझे स्निग्ध करनेवाली थी। चन्द्रिका न भी शरबत पिया।

सासुजी प्रसन्न चित्त से पलँग के नीचे एक कम्बल बिछाकर बैठी, और मेरे पिताजी की बबरता की खुली भाषा मे आलोचना करने लगी। मेरी कई बार इच्छा हुई कि उत्तर मे सासुजी को बबर कहू, लेकिन शृगार की जगह, ससुराल म वीर रस की अवतारणा अच्छी न होगी सोचकर रह गया। सासुजी अन्त तक यह कहनी बाज न आयी कि उनकी पुत्री की तरह सुन्दरी पढी लिखी सुशील और बुद्धिमती लडकी ससार म दुलभ है, अगर पिताजी ने मेरा विवाह कर दिया तो दैव दुर्योग के अवश्यम्भावी थपेड खात-खात मेरे पाचो भूत ससार के इसी पार रह जायँगे।

मैंने इसका भी जवाब नही दिया। फलत सासुजी मुझे अत्यन्त समझदार समझी। कहा "मैंने तुम्हारा ही मुँह देखकर विवाह किया है तुम्हारे पिता की तोद देखकर नही।"

मुझे इसका मतलब लगाते देर नही लगी कि पिताजी अगर मेरा दूसरा विवाह करन लगें, तो मैं दूसरी ससुराल मे अपना मुह न दिखाऊँ। मेरे ऐसे ही स्वभाव से शायद प्रसन्न होकर सासुजी ने पूछा, "अच्छा, भैया मेरी लडकी तुम्हे कैसी सुन्दरी लगती है?'

मौखिक इम्तहान मे मैं बराबर पहला स्थान पाता रहा हूँ। कहा, 'मैंने आपकी लडकी को छुआ तो है, बातचीत भी की है, लेकिन अभी तक अच्छी तरह देखा नही, क्योंकि जब मेरे देखने का समय होता था, तब दिया गुल कर दिया जाता था। दूसरे दिन दियासलाई ले तो गया जलाकर देखा भी, लेकिन सलाई के जलते ही आपकी लडकी ने मुह फेर लिया, और भापडे के अगल-बगलवाले लोग खाँसने लगे। फिर जलाकर देखने की हिम्मत न हुई।

सासुजी मुस्करायीं और उठकर भीतर चली गयीं।

भोजन के पश्चात मैंने देखा, जैसे कवि श्रीसुमित्रानन्दनजी पत को रायबहादुर प० शुकदेवबिहारीजी मिश्र ने वैसे मेरी सासुजी ने मुझे भी सौ मे एक सौ एक नम्बर दिये हैं, यानी मेरे शयन कक्ष मे बडी मोटी बत्ती लगाकर दिया रख दिया है, ताकि उनकी पुत्री के अनन्य लावण्य को मैं पूरी सार्थकता के साथ देख सकू।

मैं हर्षित हो आखें बन्द किये आगमन की प्रतीक्षा करने लगा। सबका भोजन पान समाप्त हो जाने पर मन्द गति से ससार के समस्त छन्दो को परास्त करती हुई उनकी पुत्री भीतर आयी, और मुझे पान देती हुई बोली, "तुम कुल्ली के एक्के पर आये हो ?

यह कुल्ली का एक्का कौन-सी बला है ? मैं हैरान होकर सोचने लगा। श्रीमतीजी आनतवदना खडी मुस्किराती रही।

पाँच

प्रात काल जब आख खुली, काफी देर हो गयी थी। सासुजी प्रात कृत्य के लिए पूछने आयी। निवृत्त होकर जल-पान कर, एक किताब लेकर बैठा कि सासुजी ने कहा, "सुबह सूरज की किरन फूटने के साथ कुल्ली आये थे। हमने कहा, अभी सो रहे हैं। उन्होंने फिर आने के लिए कहा है। लेकिन भैया कुल्ली से मिलना जुलना अच्छा नहीं।'

मैंने कहा, 'जब वह खुद मिलने के लिए आवेंगे तब मिलना ही

होगा।"

"लेकिन वह आदमी अच्छे नहीं।" सासुजी ने गम्भीर भाव से कहा।

"तो भी आदमी हैं, इसलिए "

"हमारा यह मतलब नहीं कि वह सींगवाले हैं। आदमियों में ही आदमी की पहचान होती है।

"जब आपको यह पहचान थी, तब आपने उनसे कह दिया होता कि मुलाकात न हो सकेगी।"

"पर गाँव के आदमी से एकाएक ऐसा नहीं कहा जाता, फिर तुम नातेदार हो, तुमसे गाँव भर के आदमी मिल सकते हैं, स्नेह व्यवहार मानकर, हमारा रोकना अच्छा नहीं।

"तो क्या आपका कहना है, जब कोई स्नेह व्यवहार मानकर आवे, तब मैं ही उसे टाल दिया करूँ?"

सासुजी अप्रतिभ होकर बोलीं, "नहीं, हमारा यह मतलब नहीं, उसके साथ रहने पर तुम्हारी बदनामी हो सकती है।"

"पर," मैंने कहा "मेरे साथ रहने पर उसकी नेकनामी भी हो सकती है।"

सासुजी मुझे देखती हुई शायद मुझमें स्पष्ट नेकनामी के चिह्न देखने लगीं।

इसी समय कुल्ली आये, और अवरुद्ध कण्ठ से आवाज दी, "जग?"

सासुजी की त्योरियों में बल पड़ गये। श्रीमतीजी एक दफा इस तरफ से उस तरफ निकल गयीं। मैं शुरू से विरोध के सीधे रास्ते चलता रहा हूँ। कुल्ली इतना खतरनाक आदमी क्या है, जानने की उत्सुकता लिये हुए बाहर निकला। मधुर मुस्किराहट से आत्मीयता जतलाते हुए कुल्ली ने सिर झुकाकर नमस्कार किया। उसे अत्यन्त सभ्य मनुष्य के रूप में देखकर मैंने भी प्रतिनमस्कार किया।

दिन के समय बाहर की बैठक में मेरे रहने का प्रबन्ध था। पलँग बिछाया जा चुका था। मैं बैठक की तरफ चला। पलँग के पास एक खाली चारपाई पड़ी थी। कुल्ली अपनी तरफ से उस पर बैठ गये।

बराबरी की होड नही की यह मुझे बहुत अच्छा लगा। पलग पर बैठकर मने अपनी सासुजी को उनके घनिष्ठ सम्बन्ध म याद कर लिया।

इसी समय पान आय। कुल्ली ने तश्तरी लेकर आदर की दृष्टि से देखते हुए मेरी तरफ बढ़ायी। मैंन गौरवपूण गम्भीरता म दो बीडे लिये। आशीर्वाद के स्वर म कुल्ली को भी खाने के लिए कहा। मुस्किराते हुए कुल्ली ने दो बीडे ले लिय, और तश्तरी चारपाई पर रख दी।

फिर बडी सभ्य भाषा म बातचीत छेडी। बात उसी शहर के इतिहास पर थी। मैं देखता था, कुल्ली मुझे, खास तौर स मेरी आखो को इस तरह देखते ह, जसे उनके बहुत बडे कोई प्रियजन ह। यह दृष्टि इसमे पहले मैंने नही देखी थी। मुझे कौतूहल तो था, पर भीतर म अच्छा लगता था। कुल्ली ने कहा, यह दलमऊ दल बाबा का था। उसका किला अब भी है।

मुझे उत्सुकता हुई। मैंने पूछा, 'क्या किला अब भी है?"

हा, गम्भीर स्वर से कुल्ली ने उत्तर दिया, 'लेकिन अब टूटकर ढह गया है। यहाँ के पुराने अपढ़ लोग तो कहते ह किला दल बाबा के शाप स उलट गया है। जौनपुर के शाह से लडाई हुई थी। बरेली के बल और दलमऊ के दल मिलकर शाह से लडे थे। यहा से कुछ दूर पर वह जगह है जहा अब भी मेला लगता है। यहा की जगह और किले पर फिर मुसलमानो का अधिकार हुआ। शाह की कब्र यहा है, एक बारहदरी भी है मकनपुर मे। बहुत पहले यह जगह कन्नौज के अधीन थी। जयचन्द का झोपडा यहाँ है, चौरासी के उस तरफ।'

यह इतनी ऐतिहासिक जगह है, सुनकर मैं पुलकित हो गया। ऐसी जगह ससुराल होने के कारण परम पिता को धन्यवाद दिया। मन म इतनी महत्ता आ गयी, जैसे मेरी श्रीमतीजी दल की ही दुहिता रही हो। मैं विच्छुरित आनन्द की दृष्टि स कुल्ली को देखने लगा।

कुल्ली न कहा, "यहा घाट भी कई देखने लायक हैं। राजा टिकइतराय का घाट तो बडा ही सुन्दर है।"

मेरी ससुराल क सम्बन्ध म एक साथ इतने नाम आयेंगे मेरा स्वप्न

मे भी जाना न था। मैं एक विशिष्ट व्यक्ति की तरह गम्भीर होकर वैठा।

मुस्कराकर कुल्ली ने कहा, "यहा और भी घाट है, मठ और मदिर। बहुत पुरानी जगह है। उजडी बस्ती। देखने लायक है।'

"मैं देखूगा।" मन ही मन ससुरालवालो को इतर विशेष कहते हुए मैंने कहा।

कुल्ली ने कहा "जब चलिए आपको ले चलू। इस वक्त तो धूप हो गयी है। शाम को चलें, तो चलकर किला देख आइए।"

मैंने सम्मति दी। कुल्ली ने कहा 'मैं चार बजे आऊँगा। यहा आदमी भी बहुत बडे-बडे हो गये है, जैसे मेरे वश के "

कुल्ली ने कुछ कवियो के नाम गिनाये। मैंने उन्हे भी बडी इज्जत से मन मे जगह दी। कुछ देर बाद कुल्ली उसी तरह आखें देखते हुए नम्रतापूवक नमस्कार कर बिदा हुए।

मैं वैठा सोचता रहा—दुनिया कैसी दुरगी है। इस आदमी के लिए इनकी कितनी मन्द धारणा है!

बैठका निराला देखकर सासुजी भीतर आयी। पहले कई बार शकित दृष्टि से भाक भाककर चली गयी थी। आते ही हृष्ट चित्त से पूछा, "कुल्ली चल गये ?'

गम्भीर होकर मैंने कहा "हा, आज की बातचीत से मुझे तो वह बडे अच्छे आदमी मालूम दिये।"

एक क्षण के लिए सासुजी फिर शकित हो गयी। फिर मुझसे कहा, "तुमने रामायण तो पढी होगी ?"

यद्यपि मैं लडकी नही कि पतिदेव की आखो मे पडी लिखी उतर जाने की गरज से रामायण-भर पढी है, फिर भी रामायण की बातें मुझे मालूम हैं, और आपके सामने परीक्षा ही देनी है तो कहता हू, कुल्ली रावण या कुम्भकर्ण नही है, यह मैं समझ गया हू।"

सासुजी मुस्कराथी, बोली "परीक्षा मे पास होने की नौकरी लिये हुए भी तुम मेरी राय मे रामायण मे फेल हुए। मैंने रामायण का जिक्र इसलिए नही किया था कि तुम कुल्ली को रावण या कुम्भकर्ण बनाओ, मेरी बात के सिलसिले मे कुम्भकर्ण तो बिलकुल ही नही आता, रावण,

वे योगी बनकर भीख मागने के प्रसग पर कुछ आता है, पर दरअसल ये दोनो मिसालें गलत आयी, मतलब कालनेमि से था।'

मैंने उसी वक्त कहा, "हा, 'कालनमि जिमि रावण राहू' लिखा है ?"

सासुजी मधुर मुस्किरायी। कहा, 'तुमने रामायण पढी है यह सही है। लेकिन यहा "

'हनुमानवाला प्रसग है कि मैं पकडकर पैर पटक देता ?" मैंने बात छीन ली जैसे, गर्व से सासुजी को देखा।

सासुजी हस दी। बोलीं, "इसमे शक नही कि तुमने बडा ही सुदर अर्थ लगाया है, पर मुझे कह लेने दो। कालनेमि की मिसाल इसलिए है कि महावीरजी कितने साधु सज्जन थे, वह भी उसकी बातो मे आ गये थे, पहले नहीं समझ सके कि उसमे छल है।"

हूँ, मैंने कहा, "यह तो नहीं समझ सके, पर आपने अपनी पुत्री को समझा दिया होता कि वह मकरी अप्सरा बनकर मुझे भेद बतला देती।'

'पर वह मकरी नही, न मकरी की तरह उसने तुम्हे पकडा है और जबकि उस तरह नही पकडा, तब मरकर, अप्सरा बनकर भेद बतलाने की उस आवश्यकता नही हुई। पर तुम अगर उसे मारकर यह भेद जानना चाहोगे, तो हत्या ही तुम्हारे हाथ लगेगी।'

सासुजी के ज्ञान पर मुझे आश्चर्य हुआ, खास तौर से इसलिए कि उनकी बात का कोई तात्पर्य मेरी समझ मे नही आया।

कुल्लीवाली चारपाई पर बैठी हुई सासुजी ने स्नेह के कण्ठ से मुझसे पूछा, तुम्हारी और कुल्ली की क्या बातचीत हुई ?

उच्छ्वसित होकर मैं कुल्ली की आद्योपान्त बातचीत कहने लगा। मुस्किराकर सासुजी बोलीं "कालनेमिवाला प्रसग पूरा उतर रहा है। वह तुम्हे यहाँ से ले जाना चाहता है।

मुझे बहुत बुरा लगा। मैंने पूछा, 'तो क्या यहाँ किला नही है ?'

'किला है सासुजी ने कहा 'लेकिन उसका मतलब तुम्हे किला दिखाना नहीं मालूम देता।

'यह आपको कैसे मालूम हुआ ?" मैंने रुखाई से पूछा।

"इस तरह कि कुल्ली के हथकण्डे हमे मालूम हैं।"

बात फिर भी मेरी समझ मे न आयी। सासुजी गम्भीर होकर बोली, "जब जाना, तब चन्द्रिका को साथ ले जाना। अकेले उसके साथ हरगिज जाना नही हो सकता।"

क्या?' मैंने कहा, "क्या कुल्ली मुझमे ज्यादा शहज़ोर है, जो चन्द्रिका बल पहुचायेगा?'

सासुजी हँसी। कहा, "यह तो जानती हू लेकिन फिर भी तुम लडके हो, मा बाप की बात का कारण नही पूछा जाता।"

कहकर उठी और कहा "चलो नहा लो भोजन तैयार है।'

छह

मैं बचपन मे आजादी पसन्द था। दबाव नही सह सकता था। खास तौर से वह दबाव, जिसकी वजह न मिलती हो। एक घटना, अप्रासगिक न होगी, कहू। मैं आठ साल का था। पिताजी जनऊ करने गाव आये थे। गाव के ताल्लुकेदार प० भगवानदीनजी दुबे थे। उन्होने एक पतुरिया बैठायी थी। उसमे एक लडकी और तीन लडके हुए थे। जब की बात है, तब प० भगवानदीनजी गुजर चुके थे। ताल्लुका उनकी धर्म-पत्नी से पैदा हुए पुत्र के नाम था। एकाएक मर गये थे, इसलिए पतुरिया को और उससे पैदा हुए लडको को अचल सम्पत्ति कुछ नही दे जा सके थे।

बाद को वसूली मे पतुरिया के लडके अडचन डालते थे। इसलिए उनके अधिकारी भाई ने खाने के लिए उन्हे कुछ बागात और मातहत खेत दिये थे। मजे मे गुजर होता था। पतुरिया थी। उसके लडको के नाम हैं—शमशेरबहादुर जगबहादुर फतहबहादुर और लडकी का नाम परागा।

सबसे छोटे फतहबहादुर मुझसे आठ साल बडे थे। चौधरी प० भगवानदीनजी ने सबसे बडे शमशेरबहादुर को बडे प्रयत्न से शिक्षा

दिलायी थी। मैंने उनका सितार वाद के जीवन मे सुना है। वह वाक्य प्रसन्नता के साथ मुझे अब तक याद है। शमशेर का उन्होने जनेऊ भी किया था और कहते हैं, जनेऊ-भोर के ब्रह्मभोज मे अपनी ताल्लुकेदारी के और प्रभाव मे आय गौर और ब्राह्मणा को आमन्त्रित करके खिलाया भी था। इसके बाद शमशेर का एक विवाह भी किया था। लडकी खालिस ब्राह्मण घर की नही, वाला ब्राह्मण विधवा मिली, उससे किया। तब स यह परिवार अपने को ब्राह्मण समझता है। जरूरत पडने पर ये लोग शमशेरबहादुर दुबे, जगबहादुर दुबे लिखकर सही करते हैं। अपनी मा पतुरिया का उसी तरह भोजन देते थे, जसे एक हिन्दू यवनी को देता।

इतने पर भी ताल्लुकेदार साहब की आखें मुदने के साथ साथ गाव के लोगो ने इनकी तरफ से मुह फेर लिया। इनके यहा का पान पानी गाँव तथा खड के चारो ओर बात की-बात मे बन्द हो गया।

जब मैं गया, तब ये इसी अचल अवस्था म थे। प्रतिशोध की ताडना से इन्होंने गाव तथा खड के हर घर का इतिहास कण्ठाग्र कर रक्खा था। और, अधिकारी अनधिकारी जो भी इनसे भली तरह बातें करता था, उसे घेरकर घण्टा सुनाते रहते थे रामचरण की बडी लडकी के लखन पासी का हमल रह गया था, शिवप्रसाद मिसिर की बहन बीस साल की ब्याही न होने की वजह स लछमन ताव के साथ भग गयी, रामदुलारे तिवारी अपने छोटे भाई की बेवा स्त्री को बठाले हैं मुन्दरसिंह का लडका पल्टन म था ससुर ने पुतोहू के हमल कर दिया, बात फैल गयी, थानदार आये, फिर रुपया देकर दबाया, और पुतोहू को बेटे के पास लेकर चले कहकर कलकत्ता, जाने कहा पहुचे वहा लम्बा होने पर उसे मारकर पुतोहू को बेटे के पास ले गये, कहा—सग्रहणी हो गयी थी, कलकत्ता इलाज कराने गये थे।

गाव भर पर इसी खानदान का मुझ पर सबसे ज्यादा प्रभाव पडा। यही मुझे आदर्श आदमी नजर आये—चेहरे मोहरे के बातचीत के उठक बैठक के। तब मेरा जनऊ नहीं हुआ था इसलिए खान-पान की रोक-थाम न थी। पतुरिया मुझसे स्नेह करती थी, खिलाती थी और लतीफे सुनाती थी। नये ढग के कुछ दादरे और गजलें सिखायी थी।

एक दिन उनके छोटे लडके ने, जिनका मुझ पर ज्यादा प्रभाव था, कहा, "तुम्हारे बडे चाचा हमारे यहाँ नौकर थे, हमारे घोडे ने उनका हाथ काटकर बेकाम कर दिया था, तब हमने माफी दी थी, वह जमीन आज भी तुम्हारी चाची जुनाया करती हैं।'

यह बात सच है। लेकिन ताल्लुकेदार भगवानदीन ने जब माफी दी थी, तब उनके यह पुत्र-रत्न भूमिष्ठ नही हुए थे। मैं तब यह इतिहास नही जानता था। मुझे मालूम पडा, यह सब इन्होने किया है।

इसके बाद कहा, "अभी तुम हमारे यहाँ का खाते हो, जब जनेऊ हो जायेगा, न खाओगे।"

मैंने खुदबखुद सोचा, "यह अन्याय है। अगर आज खाते हैं, तो कल क्यो न खायेंगे ?"

परागा बहन ने कहा, 'बदलू सुकुल के यहाँ महुए की लप्सी खाओगे, हमारे यहाँ हलुआ नही।"

मुझे झेंप मालूम दी। मैं हलुआ छोडकर लप्सी नही खाता, मन में कहा। कुछ दिन बाद जनेऊ हुआ। अब तक इस घर के आदमी आदमी ने बगावत के लिए मुझे तैयार कर लिया था। मैं प्रतिज्ञा कर चुका था कि जनेऊ चाहे तीन बार हो, लेकिन मैं यहाँ भोजन न छोडूंगा। इनकी बातें मुझे सगत मालूम देती थी। अगर गाँववाले कभी इनके यहा खाते थे, तो अब क्यो नही खाते ?

जनेऊ हो जाने के दूसरे रोज पिताजी ने एकान्त मे बुलाकर मुझसे कहा, "अब आज से, खबरदार, पतुरिया के घर का कुछ खाना पीना मत।'

मैंने कहा, "पतुरिया का छुआ तो उनके लडके भी नही खाते-पीते।" पिताजी ने कुछ समझाकर कहा होता तो मेरी समझ मे बात आयी होती। उन्होने डाँटकर कहा, "उसके हाथ का भी मत खाना।"

मैंने पूछा, 'जब ताल्लुकेदार थे तब आप लोग उनका छुआ खाते थे ?"

पिताजी ने होठ चबाकर कहा, "हम जैसा कहते है, कर।"

यही मैं कमजोर था। दिल से बात न मानी। जनेऊ के बाद दो-

तीन दिन वहाँ न गया जनेऊ चढ़ाता उतारता रहा। दिन भर में कितने जनेऊ बदलने पड़ते थे। जनेऊ के बाद दो दिन पतुरिया के घर न गया, लोगों की धारणा बँध गयी, मैं रोक दिया गया, और बात मैंने मान ली।

तीसरे या चौथे दिन प० फतहबहादुर दुबे कुएँ पर नहाने का डौल कर रहे थे, एकाएक मैं पहुँचा। मुझे देखकर वह मुस्कराये। मेरे दिल में जैसे तेज़ तीर चुभा। बड़ा अपमान मालूम दिया। मैंने उनके पास पहुँचकर कहा, "भैया, पानी पिला दीजिए।"

भैया प्रसन्न हो गये। डोल से लोटे में पानी लेकर मुझे पिलाने लगे। पिलाते वक्त उन्हें गर्व का अनुभव हो रहा था। मुझे भी खुशी थी जैसे कोई किला तोड़ा हो। उन्होंने गाँव के और लोगों को देखकर अपने ब्राह्मणत्व का गर्व किया था, मैंने अपनी प्रतिभा रक्षा की।

जिन पर भैया फतहबहादुर ने फतह पायी थी, उनमें भी सिर उठाने का हौसला कम न था। वे पिताजी के पास गये, और सिर उठाकर कहा, "आपका लड़का सबके सामने पतुरिया के छोटे लड़के का भरा पानी उन्हीं के लोटे से पी रहा था। अभी नादान है, इसलिए इस दफा माफ किये देते हैं फिर अगर ऐसी हरकत करते देखा गया, तो हम लाचार होकर आपसे व्यवहार तोड़ना होगा।"

पिताजी पहले आपा दे चुके थे फिर ब्राह्मणों ने बात सभ्य ढंग से कही थी पिताजी का क्रोध सप्तम सोपान पर पहुँचा। एक तो सिपाही आदमी, फिर हृष्ट-पुष्ट इस पर व्यक्तिगत और जातिगत अपमान! कहा है—गव्य से अधिक जाति अपमाना।' जाते ही मुझे पकड़कर फौजी प्रहार जारी कर दिया। मारते वक्त पिताजी इतने तन्मय हो जाते थे कि उन्हें भूल जाता था कि दो विवाह के बाद पाये हुए इकलौते पुत्र को मार रहे हैं। मैं भी, स्वभाव न बदलने के कारण मार खाने का आदी हो गया था। चार-पाँच साल की उम्र से अब तक एक ही प्रकार का प्रहार पाते-पाते सहनशील भी हो गया था और प्रहार की हद भी मालूम हो गयी थी।

जब पिताजी के बिजली के हाथ टूट रहे थे, मैं चिल्लाता हुआ उनकी

पहले की मारें याद कर रहा था—एक दफा जाडे के दिना म रात आठ बजे मैंन बगल की बाडी म पाखाने की हाजत रफा की, और यूरापियनो के कागज का काम बगन के पत्ता से लिया फिर भोजन क लिए रसाई जाना ही चाहता था कि भाभी न रोक दिया, उन्होन झरोखे से मुझे देख लिया था। पिताजी से यथातथ्य कह दिया। पिताजी पहल गरजे, फिर एक हाथ से मेरी बाँह पकडकर टाँग लिया, और ताल की ओर ले चले उसी तरह टाँगे हुए। वहाँ उसी तरह पकडे हुए डुबा डुबाकर नहलाने लगे, सौंचता जा, सौंचता जा कहते हुए। जब अपनी इच्छा भर नहला चुके तब प्रहार के ताप स जाडा छुटाने लगे।

याद आया—एक बार एकान्त मे मैंने पिताजी को सलाह दी थी, तुम्हारे मातहत इतने सिपाही है, तुम इस राजा को लूट क्या नही लेते ?' पिताजी ने सोचा, यह किसी दुश्मन की सिखायी बात है, जो उनकी नौकरी लेना चाहता है। मुझे मार मारकर अपने दुश्मन का भूत उतारते हुए पूछने लगे कि किसने सिखलाया है। मैं किसका नाम बतलाता ? वह उद्भावना मेरी ही थी। मैं जितना ही कहता था, यह बात मेरी ही सोची हुई थी, पिताजी उतना ही सन्देह करते और मार मारकर पूछते जाते थे। म कुछ देर बाद बेहोश हो गया था। (तब से आज तक मैं नौकर और नौकरी को पहचानता हूँ। इस बयालीस साल की उम्र म, पहले, बडी मजबूरी म नौकरी की थी, सिर्फ दो ढाई साल चली। अस्तु।)

चाँटे की ताल-ताल पर पिताजी कबूल करा रहे थे, फिर तो मैं पतुरिया के यहाँ का पानी न पियूगा, मैं स्वीकार कर रहा था। किसी तरह छुट्टी मिली।

दो-तीन दिन का समय दद अच्छा होने म लगा। एक दिन मैं बाहर निकला कि दुर्भाग्य से फिर वैसा ही प्रकरण आ पडा। गाँव के मुखिया क्रोध स भरे हुए, गाव के लोगो की रक्षा के विचार से गये, और गम्भीर होकर नाम लेते हुए कहा, 'क्या तुम दूसरा का धर्म लेना चाहते हो ? आज तुम्हारा लडका पतुरिया के लडके से ले लेकर भूने चने चबा रहा था। आज स गाँव के ब्राह्मणो मे तुम्हारा व्यवहार बन्द है।'

आज की मात्रा पिताजी म उनसे अधिक थी। फिर मुखिया ने ये

बातें डॉट के साथ नहीं थी। व्यक्तिगत बात का व्यक्तिगत रूप देते हुए उन्होंने कहा, 'तू हमारा पानी बन्द करेगा? तू पासी का है, गाँव में जा और पूछ, तेरी लड़की पटने में एक-दो-तीन-चार, एक दो-तीन चार कर रही है—हम अपनी आँखों देख आये हैं। माना कि चौधरी भगवानदीन का काम बजा था, लेकिन उनके सामने कहते! नहीं, जब तक वह जिए उन्हीं लड़कों की (अंग विशेष का उल्लेख कर कहा) धो-धोकर पीते रहे, अब सब छूत के बन फिरते हो? शहर में होते, तो देखते हम, कितने आदमियों का बम्ब का पानी और डॉक्टर की दवा छुड़ाते हो। यहाँ क्या, नाम के करने को कौन सा काम और गाने का छीता-हरन!'

मुखिया का थूक सूख गया। विशेष अस्वस्थ हो जैसे, धीरे-धीरे लौटे।

पिताजी ने गम्भीर स्नेह-स्वर से पुकारा, 'अरे ए मुखिया, तमाकू खाय जाओ!"

मैं अब विकास पर हूँ। इन मेरी आँखों में धूल भोंकी जा रही है। मैं जरूर कुल्ली का साफ आसमान देखूँगा। चर्चा अगर मेरे साथ कर दिया जायेगा, तो उस बेवकूफ को एक काम देकर अलग कर देना कौन बड़ी बात है? कहूँगा, अत्तार के यहाँ से रूह ले आ मालिश के लिए। रूह लेकर बड़े रास्ते पर खड़े रहना, हम वहीं मिलेंगे। देखा जाय ये लोग कुल्ली के नाम से क्यों कान खड़े करते हैं। इसी प्रकार अपना आगे का कार्यक्रम तैयार कर रहा था कि बैठक का दरवाजा खुला।

'भीतर आऊँ?' विनीत सभ्य कण्ठ की आवाज़ आयी। मैं समझ गया, कुल्ली है।

'आइए।' मैंने उसी सभ्यता से कहा। कुल्ली एक घण्टा पहले आये थे। बहुत बन ठने। बालों से तेल जैसे टपकने पर हो। चिकन का धुला कुरता। ऊपर वास्कट। हाथ में बेंत। गर्मी के दिनों में भी पैरों में मोजे। विनीत अप्रतिभ दृष्टि और श्री हीन मुख। बात बात में कालिदास के 'शिप्रावात प्रियतम इव प्रार्थनाचाटुकार'। तब चाटूक्ति अच्छी लगती थी, क्योंकि उसका दर्शन न समझता था, कालिदास का यौन विज्ञान भी नहीं, समझता तो उस दृष्टि चेहरे और बातचीत से ही खात्मा कर

दिया हाता।

कुल्ली न वडे अदब स इलायची दी। मैंन ले ली। कहा, "आप घण्टे-भर पहले आये।

कुल्ली न उत्तर दिया, "पांडेजी का मन्दिर भी रास्ते म देख लेंग।"

सासुजी पहले स सतक थी। फाटक बन्द कर उमी दालान मे अपना पलँग डलवाया था और दुपहर भर कुल्ली का रास्ता दखती रही। चन्द्रिका को अपनी ही दालान मे सुलाया था। दुपहर-भर उमसे हम लागा का बातें पूछती रही, 'कसे रहते हैं, क्या खाते है, कौन कैसे है, घर मे किसका स्वभाव अच्छा है। आदि आदि।

चन्द्रिका बहुत अर्थों म वेवकूफ था। उससे घर की कोई भी बात मालूम की जा सकती थी। थोडी देर मे दखता हू अपने डण्डे पर अच्छी तरह तेल चुपडे हुए चन्द्रिका बैठक के भीतर आया, साथ चलने के लिए कपडे पहनकर, बिलकुल तैयार होकर।

चन्द्रिका को देखकर कुल्ली कुछ सहम स। फिर उससे कहा, 'एक लोटा पानी हमारे लिए ले आओ।' चन्द्रिका पानी लेने गया तो मुझस बोले, "क्या यह भी साथ जायेगा ? इसका कौन-सा काम है ?"

कुल्ली के कहने से मेरा कौतूहल बढा। मैंने कहा, "साथ जाना उसका फर्ज है। लेकिन मैं उस सौदा लेने क लिए दूसरी जगह भेज दूगा।"

कुल्ली न अपने ढग से समझा। कुल्ली ने सोचा, मैं उनका इरादा समझ गया हूँ, और उनकी अनुकूलता कर रहा हू, मैं वैसा ही आदमी हूँ, जैसा उ होन सोचा था।

चन्द्रिका पानी ले आया। दो एक छींटे मुह पर मारकर कुल्ली ने कहा, "बडी गर्मी है। इतना ही आया, ब्रह्माण्ड फट रहा है।' चन्द्रिका कुल्ली को देख-देखकर आजमा रहा था कि एक झपट होने पर आसमान दिखा सकेगा या नहीं। मुह पर छींट मारकर, दो एक घूट पानी पीकर कुल्ली ने कहा, "अब देर न कीजिए।"

मैं घर के भीतर चला। फाटक के पास जाते ही मालूम हुआ, सारा घर साँस साधे हुए है। फाटक खोलने पर सासुजी मिलीं, स्तब्ध भाव

से मुझे देखती हुई। उनकी बेटी उनकी आड में। मैं सीधे अपने कमरे मे गया। बाल कघी किये, कपडे बदले, जूते पहन, फिर छाता लेकर बाहर निकला। सासुजी रास्ता रोककर खडी हो गयी। अपने यहाँ का एक डण्डा देती हुई बोली, 'इसे भी ले लो। जगल का रास्ता ठहरा।"

मैंने कहा, 'जरूरत पर मैं छाते से काम ले लूगा।"

सासुजी की बेटी हँसी। मैं बाहर निकला।

मैं फिर बठके मे न घुसू, इस विचार मे कुल्ली दरवाजे के पास आ गये थे मेरे निकलते ही निकल पडे। कुल्ली के पीछे चद्रिका भी निकला। कुल्ली ने उसे घृणा से घूरा, पर कुछ कहा नही। रास्ते पर जाकर खडे हो गये। मैं भी बढा। मेरे पीछे चद्रिका। चद्रिका का रहना कुल्ली को अखर रहा था। मुझे सासुजी की बात याद आ रही थी कि कुल्ली मुझे यहा से ले जाना चाहता है। उसका उद्देश्य किला दिखाना नही। पर उसका उद्देश्य क्या है जानने की बडी उत्सुकता हुई। इसी समय हम लोग बडे रास्ते पर आये। कुल्ली ने एक दफा मेरी तरफ देखकर इशारा किया कि अब इसे बिदा कर दो। वह इशारा, मुह और आख का बनना, मुझे बडा अच्छा मालूम दिया। दो एक दफा ऐसे इशारे और हो, देखू, इस अभिप्राय मे चद्रिका को लिये रहा। कुल्ली का उत्साह टूट गया, चाल धीमी पड गयी। पर आशा मे हृदय बाँधकर पाडेजी के शिवाले की तरफ चले।

कुछ दूर पर शिवाला मिला। चारो ओर घूमकर हम लोगो ने मन्दिर देखा, देवता के दर्शन किये, फिर मदिर की चित्र-कला देखते रहे। फिर बैठकर कुछ देर विश्राम करते और पुजारीजी की बातचीत सुनने लगे। ज्यो-ज्यो देर हो रही थी, कुल्ली का पेट ऐंठ रहा था। पुजारीजी की बातचीत चल रही थी कि उस साल भगवान् का जन्म दिन मुहर्रम के दिन पडा जब ताजिए उठ रहे थे, पुजारी भगवान की आरती कर रहे थे, आरती मे खूब बाजे बज रहे थे इन्सपेक्टर साहब के पूछने पर पुजारीजी ने कहा कि जिनके यहाँ आदमी मरा और वहीं लाश का पता नहीं उनके यहाँ तो ये सब और पुजारीजी के यहाँ आज भगवान् पैदा हुए (कहते हैं, उसी दिन पुजारीजी की स्त्री के लडका हुआ था), तो

यहाँ कितना उत्साह होना चाहिए।

कुल्ली ने बीच में टोककर कहा, "महाराज, अभी और जगह देखनी हैं।" कहकर उठकर खड़े हो गये।

मैं पुजारीजी की बात खत्म होने पर उठा। तब तक कुल्ली सैंकड़ों मतबे निगाह में मुझे उठाते रहे। मैं देखता और सुनता रहा। शिवाले के बाहर निकलकर कुल्ली ने फिर इशारा किया। इस बार कुल्ली का इशारा चन्द्रिका ने देख लिया। लेकिन बात उसकी समझ में न आयी। उसने सोचा था, आगे चलकर कुल्ली को मारने की नौबत आयेगी, पर इस इशारे में उसे काफी स्नेह दिखायी दिया।

इसी समय अत्तार के यहाँ से मैंने रूह खरीद लेने की आज्ञा दी। चन्द्रिका असमंजस में पड़ गया—उसे मामूजी की आज्ञा साथ न छोड़ने के लिए थी, मामूजी की बात याद आयी—साथ न छोड़ना, दोस्त-दुश्मन कौन कैसा साथ रहता है, लेकिन कुल्ली को दुश्मन में शुमार न कर सकने के कारण उतरे गले से कहा, "मैं भी किला देख लेता।"

कुल्ली ने कहा, 'क्या आज में किले का आना बन्द हुआ जाता है? कल देख लेना, कहीं मालिक की हुक्म अदूली की जाती है? जाओ, रूह खरीद लो। वह आगे दूकान है।"

चन्द्रिका मेरी तरफ देखने लगा। मुझे भी उत्साह था। कहा, "खरीद कर यहीं या बड़े रास्ते पर रहना। हम घण्टे भर में आ जाते हैं।"

चन्द्रिका मुड़ा। कुल्ली ने उत्साह से सीना तानकर गर्दन उठा दी। मुझे भी यह मुद्रा अच्छी लगी। बंगाल में ऐसी अंग भंगी देखने को न मिली थी।

हम ढाल से नीचे उतरे। किला देख पड़ने लगा। मिट्टी के दो काफी ऊँचे टीले हैं एक दूसरे से जुड़े हुए। इन्हीं पर इमारत थी। इस समय केवल एक बारहदरी दूर से दिख पड़ती है। किले के चारों तरफ ईंटों की चहारदीवारी थी जगह जगह मालूम देता है। ईंटें कहीं कहीं बहुत बड़ी हैं। बाकी इमारत की ईंट लखाऊ की जैसी कागजी थी, लेकिन बहुत पकी हुई मजबूत। घुसते एक फाटक मिला, मजे का, इन्हीं ईंटों का बना। फाटक का रास्ता कागजी ईंटें गाड़कर बनाया हुआ, नीचे से

ऊपर को चलना हुआ, गऊघाट की तरह का। दूर से दृश्य अच्छा मालूम देता है ऊपर से और अच्छा। हम लोग फाटक से होकर चढ़ते हुए किले के भीतर गये। जाने पर प्राचीनता का नशा जकड लेता है, जिसकी स्तब्धता दूर इतिहास रात मे ले जाकर एक प्रकार का प्रगाढ आनन्द देती है। कुल्ली ने दूसरे टीले की तरफ हाथ उठाकर कहा, "वह रनवास है। बैठ गया है, दो एक जगह मे मालम दता है। नीचे की दालानें देख पडती है। एक तहखाना भी है। लाग कहते हैं, यहा बडी दौलत है।"

फिर आगे बढे। एक जगह एक मस्जिद थी, टूटी हुई। कुल्ली न कहा, यह मस्जिद है। शाह का कब्जा होन के बाद बनी थी। इसीलिए दूसरी इमारतो के मुकाबले नयी मालूम देती ह। सामने यह सिपाहियों के रहने की जगह थी, अब कुछ कब्रें हैं। दखिए उस फाटक स उस बारहदरी तक कई फाटक थे। डयोढ़िया थी। सिपाही पहरे पर थे। जगह दखते जाइए, धीरे धीरे कैसी ऊँची होती गयी है। बारहदरी के पास किला काफी ऊँचा है।"

वैस ही बढते हुए कुल्ली न दायी तरफ एक कुआँ दिखलाया। उस समय वह सूख गया था। कुएँ के आग ढाल म नीचे किले का नाबदान है। मुसलमाना का अधिकार होन पर किले की पत्थर की मूर्तियाँ वहा फेंक दी गयी थी, अब भी काफी सख्या म पडी है। इसी जगह स बाहर निकलने को, कहते हैं एक सुरग थी। हम लोग बारहदरी की तरफ चल। कुल्ली न कहा 'पहल यहा बहुत अच्छी इमारत थी। कुछ टूट गयी थी। अँगरेजो ने मरम्मत करायी, और अपनी कचहरी लगात थ।'

मैंन देखा, जैस एक छोट पहाड की चोटी पर पहुचा हूँ। बारहदरी के ठीक नीचे गगा वह रही थी। कुछ सीढियाँ बनी थी जिनस मालूम होता था, ऊपर स नीचे गगा तक उतरन का जीना बना था। किला ऐसे मौके पर कि एक तरफ स गगा का प्रवाह जैसे रोके हुए है। बरसात मे किले की बगल म सटकर गगा बहती ह। एक तो वहा गगा का पाट भी चौडा है, दूसरे बहुत बडा कछार भी है ऊची जगह निगाह दूर-दूर तक जाती है, जिससे जी का वैसा ही प्रसाद मिलता है। दखकर मुझे बडा आनन्द आया। मेरी खुशी स कुल्ली भी खुश हुए। बारह दरी

पर जानवाली सीढी के सिर पर बैठ गये। मैं भी थका था, बठ गया।

कुल्ला न कहा, "दास्त, क्या हवा चल रही है!"

कुल्ली का दोस्त कहना मुझे बडा अच्छा लगा। मित्रता की तरफ और गुरडम के खिलाफ मैं पहले स था। मैंन कुल्ली का समथन किया। कुल्ली मुस्किराय मेरी मैत्री की आवाज़ पर, फिर इस स्वर का और उदात्त कर बोले "दास्त, तुम्हारा चेहरा बतलाता है कि तुम गात हो, कुछ सुनाओ वक्त की चीज़।"

मै गदगद हो गया यह सोचकर कि वक्त की चीज़ सुननेवाला सगीत ममन है। तारीफ मे मैं अभी कल तक उमड आता था, उमड जाने पर आदमी हल्का हो जाना है, न जाना था। गाने लगा। कुल्ली सिर हिलाने लगे। मैं देखता था ताल के साथ कुल्ली के सिर हिलान का सम्बन्ध न था। आश्चय हुआ कि ऐसा समझदार यह क्या कर रहा है। इसके बाद कुल्ली न सम की जगह समझकर "हूँ" किया, वहा सम न थी। एक कडी गाकर मैंने गाना बन्द कर दिया।

कुल्ली न कहा, "यार तुम तो बहुत ऊँचे दर्जे के गवैये हो, हमारा इतना जाना न था।"

मैं फिर फूल गया। कुछ उस्तादा के नाम गिनाये, जिनमे कुछ से कुछ सीखा था, अधिकाश के नाम सुने थे। कहा, "इन सबसे मैंने यह विद्या ली है।

मेरे गुरुत्व पर गम्भीर होकर कुल्ली बोले, "हा ये सब लोग राना साहब के यहाँ आते हैं। पर तुम्हारी और बात है। तुम्हारा गला क्या है! तुम्हारा गला है जादू है?'

मैं सयत होने लगा, कुल्ली जा कुछ कह रहे है, ठीक है, समझकर।

शाम हो रही थी। घर की याद आयी। मैंने कहा, "अब चलना चाहिए।'

कुल्ली भावस्थ हा गय, फिर एक गम साँस छोडी। कहा, "अच्छा, चलो। हम लोग चलें।"

कुल्ली जिस रास्ते से ल चले, यह नया था। मेरे पूछने पर कहा "ज़रा ही दूर मेरा मकान है। अपनी चरण-रज से पवित्र तो कर दो।"

तब मैं ब्राह्मण था, इसलिए चरण रज से पवित्र करने की ताकत है, समझता था। कुल्ली के मकान के साथ कुल्ली का देह भी सलग्न है भाव रूप से इसलिए उसके पवित्र करने की बात भी मेरे मन म आयी, क्योंकि मैं देख चुका था, कुल्ली की भली बात का व्यग्य रूप से लोग बुरा अथ लगाते है, फलत कुल्ली के पवित्र होने की जरूरत है। कुल्ली अब तक के आचरण से किसी तरह भी अनाचरणीय मनुष्य नही। उसका यह भाव लोगो मे व्यक्त हो जाना चाहिए। चुपचाप कुल्ली के साथ चला जा रहा था। पुराने बाजार से कुछ आगे चौरासी पर कुल्ली का मकान था। कुल्ली ने घर का ताला खोला। गृह की यह दशा देखकर मैंने सोचा—कुल्ली त्यागी मनुष्य है। जम्बुको के वन मे अकेला सिद्ध वदान्त-केसरी की तरह रहता है। कुल्ली ने लालटेन जलायी। फिर कहा, 'यही झोपडी ह। घर म मैं अकेला रह गया हूँ। कुछ जमीदारी है। लडके-बच्चे जोह जाते कोइ नही, दो एकके चलवाता हू। शौक से रहता हू यह आदमियो को अच्छा नही लगता। मान लो, कोई बुरी लत हो, तो दूसरो का इसम क्या ? अपना पैसा बरबाद करता हूँ!'

बात मुझे सगत मालूम दी। मैंने कहा, 'दूसरो की ओर उँगली उठाये बिना जस दुनिया चल ही नही पाती।'

कुल्ली खुश होकर बोले, "हाँ, लेकिन दुनिया मे हमारे तुम्हारे जैसे आदमी भी है, जो लोगो के उँगली उठाने से घबराते नही।

कुल्ली ने बडे स्नेह के साथ मुझे पान दिया, और मेरे पान लेते वक्त जरा मेरी उँगली दबा दी। मैं बहुत खुश हुआ यह सोचकर कि ससुराल क सम्बन्ध स कुल्ली मेरे साले होते हैं मुझसे दिल्लगी की है। मुझे खुश देखकर कुल्ली विचित्र तरह से तने। कुछ देर तक इस उत्तेजना का आनन्द लेकर बोले, 'कल तुम्हारा न्योता है मिठाई का। लेकिन किसी म कहना मत, क्योंकि यहाँ लोग सीधी बात का टेढा अथ लगाते हैं। कल नौ बजे तक आ जाओ। फिर बहुत दीन होकर बोले, 'गरीबो पर भी कृपा की जाती है।'

आजकल जिस तरह लोग मेरा व्यग्य नही समझते, उसी तरह पहले लोगो का व्यग्य मेरी समझ म न आता था। मैंने कुल्ली का आमन्त्रण

स्वीकार कर लिया, और चलने को तैयार हुआ।

मेरे मुँह की ओर देखते हुए कुल्ली ने कहा "पान भी क्या खूबसूरत बनाता है तुम्हें ! तुम्हारे होठ भी गजब के हैं। पान की बारीक लकीर रचकर, क्या कहूँ शमशीर बन जाती है।"

कुल्ली हृदय की भाषा में कह रहे थे, मैं कुल अथ ससुराल के सम्बन्ध से लगाता हुआ बहुत ही प्रसन्न हो रहा था।

मैं बढ़ा। कुल्ली बड़े रास्ते तक आये और नमस्कार करके कहा, "कल सबेरे नौ बजे इन्तजार करूँगा।"

मैंने भी प्रतिनमस्कार किया। ढाल के पास चन्द्रिका खड़ा था। देखकर कहा "बहुत देर कर दी बाबा, तुमने। मुझे शंका हो रही थी कि कहीं धोखा न हुआ हो।"

मैंने कहा, "चन्द्रिका, धोखा तो खैर नहीं हुआ लेकिन धोखा देना है। तुम्हारी नानी पूछें, तो कहना, हम साथ थे।"

चन्द्रिका ने स्वीकार कर लिया। मैं कुल्ली की बातों के विचार में था, चन्द्रिका के स्वभाव के अनुकूल समझाना याद न था।

सासुजी सबान्तःकरण से हमारा रास्ता देख रही थीं। मैं कपड़े छोड़ने भीतर गया सासुजी चन्द्रिका से पूछने लगीं, "कहाँ-कहाँ गये चन्द्रिका ?"

चन्द्रिका ने उतरे गले से कहा, "कहीं नहीं बाबा के लिए रह लेने गया था। इतना कह जाने पर चन्द्रिका को होश हुआ।

सासुजी को इतनी पकड़ काफी थी। पूछा, 'भैया ने भेजा था ?'

'हाँ।' चन्द्रिका ने रुखाई से कहा, गलती कर जाने के कारण।

सासुजी ने पूछा, "फिर ?"

चन्द्रिका रुका, और फिर सँभलकर कहा, "फिर किले गये।'

सासुजी ने पूछा, "वहाँ सतमंजिला मकान देखा था ?"

चन्द्रिका ने कहा, 'हाँ।

सासुजी ने पूछा, "वहाँ एक बहुत बड़ा ताल है, वहाँ गये थे ?"

चन्द्रिका ने कहा, 'हाँ।'

सासुजी ने पूछा, "किले पर लखपेड़ा बाग है, देखा था ?'

चन्द्रिका ने कहा, "हाँ, बहुत देर तक सब लोग देखते रहे।"

सासुजी समझ गयी, भीतर से एक डण्डा लाकर दिखाती हुई बोलीं, 'देख, दहिजार लोध! भले आदमी की तरह ठीक ठीक बता, नहीं तो वह डण्डा दिया कि मुह टेढा हो गया। तू कहाँ था ?"

चन्द्रिका ने कहा, 'देखो नानी, मुझे मारो मत, न मैं किले का नौकर हू, न किसी दूसर का। जिनका नौकर हूँ, उनस पूछ लो।'

बात पानी की तरह साफ हो गयी। सासुजी को पूछने की जरूरत नहीं हुई। मैं निकला, तो मुह पर ऐसी दृष्टि उठान डाली, जैसे मुह सड गया हो। चन्द्रिका को पास खडा देखकर मैं समझ गया।

कुछ देर बाद सासुजी भीतर गयी। मैं निश्चय कर लेने के विचार से बाहर निकला। पीछे पीछे चन्द्रिका भी आया। फाटक के बाहर आकर मुझे पकडकर रोने लगा। कहा, 'बाबा, मैं न रहूगा।'

मैंने कहा, "अरे चन्द्रिका, इतनी जल्दी ऊब गये? अभी कुछ दिन रूह की मालिश तो करो।'

चन्द्रिका ने रोनी आवाज में सासुजी की प्रश्नावली और अपने उत्तर सुनाये। मेरे होश उड गये। बडी लज्जा लगी। लेकिन उपाय न था।

हार खाने पर चिढ हुई। मन ने कहा, 'क्या बिगाड लेंगे? वे सभ्य आदमी ही नहीं है। होते, तो नौकर से भेद न लेते फिरते। इसी वक्त पूरी लापरवाही से रूह की मालिश कराओ। इन्हें समझा दो कि तुम देहात के रहनेवाले ऐरे गैरे नहीं हो। तुम्हारी दूसरी ही बातें हैं।'

मन मे आते ही मैं फाटक के भीतरवाले आगन मे गया, और चारपाई पर चन्द्रिका को दरी बिछाने के लिए कहा। सासुजी मेरी बिगडी मुद्राएं कुछ देर तक देखती रही, फिर चुपचाप भीतर चली गयी। चन्द्रिका ने दरी बिछायी, रूह की शीशी ले आया। मैं चित्त लेट गया, और छाती दिखाकर कहा 'यहा लगाओ।

चन्द्रिका ने रूह और तेल में भेद नहीं किया। २०) की रूह एक साथ गदोरी में लेकर छाती में थपथपाया। फिर कहा 'लेकिन बाबा, इतनी ही है, इसमें क्या होगा ?'

एक दफा मेरा जी छन्न से हुआ कि इसने बीस की माथे दी पर सास साधे पडा रहा कि कुछ कहूँगा, तो अशिष्टता होगी। रूह की खुशबू

चारो तरफ उड चली। ससुरजी सूघने-सूघने वाहर निकल आये, और सूघत और आँखें तिलमिलात हुए बोले, 'अरघानें उठ रही हैं, बच्चा।"

मैंने आवाज दी। उन्होंने खुश होकर कहा, 'इतना अतर फुलेल न लगाया करो, हूरें पकडती हैं।" कहकर प्रसन्न होकर चले गय।

सुगध भीतर तक आफत कर रही थी। सासुजी वाहर निकली। चद्रिका तल्लीन होकर तल की-जमी मालिश कर रहा था। सासुजी कुछ देर तक देखती रही। फिर पूछा, 'इत्र है ?'

मैंने गम्भीर होकर कहा, "रूह।"

सासुजी चौंकी। पूछा, "कितन की है ?"

मैंने गम्भीर शालीनता से कहा, "बीस रुपय की।"

सासुजी देर तक विस्मय की दृष्टि म देखती रही। फिर पूछा, "एमी मालिश कितन कितन दिन बाद करते हो ?"

मैंने वैसे ही उदात्त स्वर स उत्तर दिया, "एक-एक दिन का अँतरा देकर।

सासुजी फिर थोडी देर तक देखती रही, और एक लडकी की तरह पूछा, "इससे क्या होता है ?"

मैंने कहा, "सीना तगडा होता है।"

मेरा सीना बचपन म चौडा था। सासुजी न विश्वास कर लिया। कुछ देर तक स्तब्ध भाव से खडी रहकर अत्यन्त स्वाभाविक स्वर से पूछा, 'तुम्हारे पिताजी तनख्वाह कितनी पाते है ?"

इसका उत्तर वडा अपमानजनक था, पिताजी की तनख्वाह बहुत थोडी थी, किसी भली जगह किसी तरह कहने लायक नही। पर जहा विश्व का ऐश्वर्य झूठ है, वहाँ झूठ का हिसाब लगाना भी किसी सत्य की शक्ति की बात नही। सही बात को दबाकर गले म खूब जोर देकर कहा, "पिताजी की आमदनी की कितनी सूरतें हैं, क्या कहूँ ? उनकी आमदनी कब कितनी हो जायेगी, कहा स, कैसे, किससे, यह वही नही बता सकते।"

उत्तर सुनकर सासुजी एकाएक रोने लगी, कुछ देर रोकर स्वय ही भाव स्पष्ट किया, "जो बाप अपने बेटे के लिए रोज मालिश म बीस रुपये की रूह खर्च करता है, वह अपनी बहू के लिए बीस सौ का

चढावा भी नही लाता ? अर राम र ! मुझ क्या हा गया, जो मैंन शादी कर दी।'

मुझे एक आश्वासन मिला कि पहली बात दब गयी। रुह सूख चुकी थी, चंद्रिका रगड रगडकर आग निकाल रहा था। मैंन मालिश बन्द करा दी।

घर मे सन्नाटा था, निम 'मसा नहीं भनाय कहा है। दर तक भोजन के लिए बुलावा न आया। बठा 'चपट पजरिका' क घाव श्लोक याद करता रहा। बिलकुल विरोधाभास—एक दिन म यह हाल ता पूरी गवट्टी कैस पार होगी ? साले साहब, जो इस समय क्ई बच्चा क बाप हैं तब मुश्किल स चार साल के थे। एकाएक चिल्लाकर रो उठे। चन्द्रिका झपकियाँ ले रहा था, सोचा—खाने का बुलावा है, सजग होकर सुनन लगा, फिर वीतश्रद्ध होकर हाथा से घुटन बांधे।

मैंने पूछा, 'चंद्रिका, कैसा लग रहा है ?'

चन्द्रिका ने कहा, 'बाबा घर म भोजन कर अब तक एक नींद सो चुकता था।''

मैंन कहा, ''यहाँ भोजन भी तो अनक प्रकार के मिलते है।

चन्द्रिका न ऊंघत हुए कहा, तल आर निमक मिली जब चनी की रोटी का स्वाद यहाँ नहीं मिलता।'

इसी समय सासुजी का नौकर आया, और बडे गम्भीर स्वर म आवाज दी, ''भोजन तैयार है।'

भोजन के समय बिलकुल सन्नाटा। एक एक साँस गिनी जा सकती थी। कोई किसी से बोलता न था। मैं निरपक्ष भाव स भोजन कर हाथ मुह धोकर, अपन शयन-कक्ष म जाकर लटा।

घर भर का भोजन हो जान पर कल की तरह आज भी श्रीमतीजी आयी। लेकिन गति म छन्द नहीं बजे। पान दिया पर दृष्टि म वह अपनापन न था। मैं एक [illegible] । उनर [illegible] खाली कर दी। वमन पैर दबाकर [illegible] बैठ गया, कुछ-कुछ मेरी समझ म [illegible] दिल अपन आप बोलना [illegible] देर

तक चुपचाप पडी रहकर उन्होंने कहा, "इत्र की इतनी तेज खुशबू है कि शायद आज आँख नही लगेगी।'

मैंने कहा, अनभ्यास के कारण। एक कहानी है, तुमने न सुनी होगी। एक मछुआइन थी। एक दिन नदी किनारे से घर आते रात हो गयी। रास्ते मे राजा की फुलवाडी मिली, उसमे एक झोपडी थी वही सो रही। फूलो की महक से आग गमक रहा था। मछुआइन रह रहकर करवट बदल रही थी। आख नहीं लग रही थी। फूलो की खुशबू मे उसे तीखापन मालूम दे रहा था। उसे याद आयी, उसकी टोकरी है। वह मछलीवाली टोकरी सिरहाने रखकर सोयी, तब नींद आयी।

श्रीमतीजी गर्म होकर बोली, 'तो मैं मछुआइन हू ?"

"यह मैं कब कहता हू," मैंने विनयपूर्वक कहा, 'कि तुम पण्डिताइन नही मछुआइन हो, मैंने तो एक बात कही जो लोगो मे कही जाती है।

श्रीमतीजी ने बडी समझदार की तरह पूछा, "तो मैं भी मछलियां खाती हूँ ?'

मैंने बहुत ठण्डे दिल से कहा, "इसमे खाने की कौन-सी बात है ? बात तो सूघने की है। अपने बाल सूघो, तेल की ऐसी चीकट और बदबू है कि कभी कभी मुझे मालूम देता है कि तुम्हारे मुह पर कै कर दू।'

श्रीमतीजी बिगडकर बोली, "तो क्या मैं रण्डी हूँ, जो हर वक्त बनाव-सिंगार के पीछे पडी रहूँ ?"

"लो," मैंने बडे आश्चर्य से कहा, "ऐसा कौन कहता है लेकिन तुम बकरी भी तो नही हो कि हर वक्त गधाती रहो, न मुझे राजयक्ष्मा का रोग है, जो सूधने को मजबूर होऊँ।

श्रीमतीजी जैसे बिजली के जोर से उठकर बैठ गयी। बोली, 'तुम्हारी ऐसी ही इच्छा है तो लो, मैं जाती हूँ।

सिर्फ मेरे जवाब के लिए जैसे रुकी रही।

मैंने बडे स्नेह के स्वर से कहा "मेरी अकेली इच्छा से तो तुम यहाँ सोती नही, तुम अपनी इच्छा की भी सोच लो।"

श्रीमतीजी ने जवाब न दिया जैसे मैंने बहुत बडा अपमान किया हो इस तरह उठी, और दरवाजा खुले छोडकर चली गयी।

मैंने मन में कहा 'आज दूसरा दिन है।'

सात

सवेरे जब जगा, तब घर में बड़ी चहल पहल थी। साले साहब रो रहे थे। सासुजी ने मारा था। ससुरजी खुड्डी में गिर गये थे, नौकर नहला रहा था। घर में तीन जोड़े बैल घुस आये थे। श्रीमतीजी लाठी लेकर हाँकने गयी थी, एक के ऐसी जमायी कि उसकी एक सीग टूट गयी। ज्योतिषीजी बुलाये गये कि बतलाएँ, इसका क्या प्रायश्चित्त है। महरी पानी भरने गयी थी, रस्सी टूट जाने के कारण पीतल का घड़ा कुएँ में चला गया था। घर का पानी खत्म हो आया था। दूसरी रस्सी न होने के कारण पानी भरना बन्द था। पड़ोस में सवेरे रस्सी मिली नहीं। लोगों ने कहा "हमारा पानी भर जाय तब ले जाओ।' चन्द्रिका सवेरे से लापता था। जब मेरी आँख खुली, तब सुना, सासुजी कह रही हैं, "जब विपत आती है, तब एकसाथ आती है।

मुझे इसकी अँगरेजी उक्ति मालूम थी। समझा, उठने के साथ सासुजी श्रीमतीजीवाली घटना पर मुझी को सुनाकर कह रही हैं। जम कर धीरे धीरे उठा। घर में जितने थे, सब व्यस्त थे। क्रमशः एक एक दुर्घटना मालूम होती गयी। चन्द्रिका का पता न था। ससुरजी को साफ कर जब उनका नौकर आया, उसने कहा चन्द्रिका ने कहा है, मैं गाँव जा रहा हूँ, पैसे पास नहीं हैं रेल की पटरी-पटरी चला जाऊँगा, रास्ता नहीं जाना, बाबा चिन्ता न करें, कहकर नहीं जा रहा, क्योंकि बाबा नहीं छोड़ेंगे।' फिर उसने अपनी तरफ से कहा कि मुझसे कह गया है कि मैं किसान आदमी हूँ, मेरी नौकरी न रहेगी तो मुझे इसकी चिन्ता नहीं, किसानी और मजदूरी कर खाऊँगा।

मैं समझ गया रात से ही वायुमण्डल बिगड़ा है सवेरे किसी ने उसमें कुछ कहा होगा। ज्यादा शंका मुझे श्रीमतीजी पर हुई। मैंने पूछा, जब बैल की सींग तोड़ी गयी थी, तब चन्द्रिका था या नहीं ?'

नौकर ने इशारे से सिर हिलाकर कहा, "हाँ।"

भग भग शान्ति की बातचीत हो रही थी कि आठ का वक्त हो गया। मुझे मित्रवर कुल्ली की याद आयी। तैयार होकर बाहर निकला। कुएँ के पास भरा घडा लिये एक युवती मिली। सगुन देखकर मन प्रसन्न हो गया। कुछ आगे बढने पर दुहकर छोडी हुई एक गाय बछडे को पिलाती हुई मिली। मेरी चाल और तेज हुई। कुछ लोग बडे रास्ते पर मिले, मुझे देखकर तारीफ करने लगे—डील डौल, चाल चलन की। मैं सयत मुद्रा से पैर बढाये कुल्ली के घर की तरफवाले रास्ते को बढा। देखा, कुल्ली रास्ते पर खडे थे। दसन के साथ पूरी स्वतन्त्रता से कदम उठाते हुए मथुरा मे नादिरशाह की सेना की तरह, मेरी तरफ बढे, जैसे मित्र के भी देश पर पूरी विजय पा ली है। मुझे भरा घडा मिला ही था मेरे हृदय मे मैं कुल्ली को देख रहा था।

कुल्ली हृदय से लिपट गये "आओ, आओ। मुझे मालूम हुआ, गगा और यमुना का सगम है।

कुल्ली बडे आदर से मुझे अपने घर ले गये। एक बडा आईना चारो ओर तीन लड माला से सजा था। मेरे जाने के साथ-ही साथ पकडकर सामने जाकर खडे हुए। मैंने देखा, बिना माला पहने हम दोनो माला पहने हुए हैं। कुल्ली की कला पर जी मुग्ध हो गया। कुल्ली आईने मे ही मुझे देखकर हँसे। देखकर मैं भी मुस्किराया। कुल्ली बहुत प्रसन्न होकर बोले, अच्छा।'

फिर जल्दी-जल्दी भीतर एक कमरे मे गये, और मिठाई की तश्तरी उठा लाये। पलँग के सामने एक ऊंची चौकी रखी थी, उस पर रख दी। फिर जल भरा लोटा और गिलास वही रख दिया, और मुझसे बडे विनय के स्वरो से खाने के लिए कहा।

मैं खाने लगा। कुल्ली विनीत चितवन से मेरा खाना देखते रहे। भोजन समाप्त होने पर उन्होंने हाथ धुलाया पोछाया। फिर पान दिया।

पान खाकर मैं पलग पर बैठा। बडा सुन्दर पलँग। सुन्दर गलीचा बिछा। कुल्ली ने इत्र की एक शीशी दिखायी। कहा, "मैंने मगा लिया

है। रह नहीं, क्योंकि मालिश तो करनी नहीं।"

मैं अनातयौवन युवक की तरह कुल्ली को देखने लगा। कुछ देर तक कुल्ली स्तब्ध रहे। मैंने देखा, कुल्ली का चेहरा बहुत विकृत हो गया है। मतलब कुछ मेरी समझ में न आया। कुल्ली अधीरता से एक दफा उचके लेकिन उचककर वहीं रह गये। मैं सोच रहा था, इसे कोई रोग है। कुल्ली ने एक दफा भरमक प्रेम की दृष्टि से मुझे देखते हुए कहा, 'तो मैं दरवाजा बन्द करता हूं।'

लेकिन आवाज के साथ जैसे लरखराकर रह गये। कुल्ली से मुझे भय हुआ, इसलिए नहीं कि कुल्ली मेरा कुछ कर सकता है, बल्कि इसलिए कि कुल्ली के लिए जल्द डॉक्टर दरकार है। घबराकर मैंने कहा, "क्या डाक्टर बुला लाऊं ?"

'ओह ! तुम बड़े निठुर हो।" कुल्ली ने कहा।

मैं बैठा सोच रहा था कि कुल्ली की इस ऐंठन से मेरी निठुरता का क्या सम्बन्ध है। सोचकर भी कुछ समझ न पाया।

कुल्ली एकाएक उचके, अबके भरसक जोर लगाकर, यह कहते हुए, "मैं जबरदस्ती "

मुझे हँसी आ गयी, खिलखिलाकर हँसने लगा। कुल्ली जहाँ थे, वहीं फिर रह गये। और, वैसे ही कुएं में डूबे हुए-जैसे कहा, 'मैं तुम्हें प्यार करता हूँ।"

मैंने कहा, प्यार मैं भी तुम्हें करता हूँ।'

कुल्ली सजग होकर तन गये। कहा, 'तो फिर आओ।"

मेरी समझ में न आया कि कुल्ली मुझे बुलाता क्या है। मैंने कहा "आया तो हूँ।'

कुल्ली ने मुझसे पूछा, 'तो क्या और कहीं भी नहीं ?"

बात एक भी मेरी समझ में ज्यों-ज्यों नहीं आ रही थी, त्यों त्यों गुस्सा बढ़ रहा था। बोला, 'साफ साफ कहो, क्या कहते हो ?"

कुल्ली पस्त, जैसे लत्ता हो गये।

"अच्छा, नमस्कार।' कहकर मैं बाहर निकला। वह रूप मुझे बिलकुल पसन्द नहीं, इतना ही समझा।

कुल्ली की पहली मुलाकात का अन्त हुआ। मैं घर आया। मेरी तरफ से चारों ओर सन्नाटा, जैसे होकर भी न होऊँ। सबको सविनय अवज्ञा करते देखकर मुझे पिताजी की याद आयी। मालूम हुआ, पिताजी बहुत अभिन्न मनुष्य हैं। उन्होंने ससुरजी की चाल का एक वाक्य में जवाब दिया और यहाँ का सारा वायुमण्डल घहरा उठा, मैं ऐसा हूँ कि वाक्य पर वाक्य चढ़ते हैं, मैं जवाब नहीं दे पाता।

बिलकुल व्यवहार की वाणी में सासुजी ने पूछा, "भैया, कहाँ गये थे ?"

मैंने उस समय झूठ बोलना पाप समझा। कहा, "कुल्ली के यहाँ।" अधिक बढ़ाकर कहना भी उचित नहीं मालूम दिया।

सासुजी मुँह की ओर देखकर रह गयीं। शाम से ही वह निःशंक थीं। श्रीमतीजी के उठ जाने के बाद से तो दावा का लेश न रह गया था। सबके में निःशंकता के निर्भय आचरण भी शुरू हो गये थे। मेरे जान तक गति में चारुता आने लगी थी।

मैंने सोचा, हौसला तोड़ दिया जाय। चन्द्रिका के चले जाने से मैं लँगड़ा हो गया हूँ। कहा, "बैल की सींग ही नहीं तोड़ी गयी, मेरा पैर भी तोड़ा गया है। बैल की सींग के लिए तो आपने प्रायश्चित्त किया कराया, मेरे पैर के लिए क्या इलाज सोचा है ?"

सासुजी पैर पकड़कर बैठ गयीं, "कहाँ, देखूँ ?"

मैंने कहा, "अपनी बेटी को बुलाइए।"

सासुजी ने कहा, "बिटिया, रात को पैर दबाने के वक्त तुमने भैया की नस चिटका दी है ? यहाँ आओ। हमसे यह क्या नहीं कहा ?"

"कहा ?" शंकित दृष्टि से देखती हुई श्रीमतीजी आयीं।

फुटबाल खेलते-खेलते मेरे दाहिने अँगूठे में गुम्मड़ पड़ गया था, बायें हाथ से दाहिना अँगूठा मोटा मालूम देता है। सासुजी को कुछ नजर न आया, मोटा अँगूठा देख पड़ा, तो पकड़कर कहा, "यह है ?" फिर स्वगत कहा 'यही होगा।' फिर अपनी बेटी से बोलीं, "देखो तो बिटिया, उससे मोटा जान पड़ता है न ?"

उनकी लड़की चिन्तित भाव से बोली, "हाँ।" फिर माँ की अनु-

वतिता की। वह भी पकड़कर दबाने लगी।

सासुजी ने कहा, "क्या भैया, हल्दी-चूना गम कर दें ?"

मैंने सोचा, जिसने पैर पकड़ा है, उसे माफ करना चाहिए। इस समय चन्द्रिका की बात रहने दी जाय। वैराग्य से कहा, "रहने दीजिए।"

बड़े स्नेह से सासुजी ने कहा, "नहीं, रहने क्या दिया जाय ? आओ तो बिटिया, हल्दी चूना गम करो।'

मैं, जो सुलह हो जाय जग होकर, सोच रहा था। इसलिए रहस्य को बाद में ही रहने दिया। श्रीमतीजी हल्दी चूना गम करने लगीं।

आठ

दूसरे दिन रूह की मालिश के लिए कहने पर सासुजी ने कहा, "हमारे यहाँ रूह की मालिश नहीं चल सकती। हम इतने बड़े आदमी नहीं। कड़ुआ तेल लगाओ। खाया तो घी जाय, जो रुपये में सेर भर मिलता है, और लगायी रूह, जो अस्सी रुपये तोले आती है ?"

मैंने सोचा, अब गवही खत्म है। लेकिन श्रीमतीजी का आकर्षण जबरदस्त था। यद्यपि 'चर्पट पञ्जरिका' स्तोत्र कई बार उन्हें सुना-सुनाकर पाठ किया, फिर भी वैराग्य की मात्रा श्रीमतीजी ने मुझमें कभी नहीं देखी। वह भी मेरे चारों ओर धोखा-ही धोखा देखने लगीं। ललित-कला-विधि में मैं कालिदास नहीं था, उन्होंने मेरा शिष्यत्व स्वीकार नहीं किया।

रुपये खत्म हो चुके थे। रूह अपनी गाँठ से नहीं मँगा सकता था। सासुजी इस ताक में थीं मैं कितने दफे मँगाकर मालिश कराता हूँ देखें, मेरे पिताजी ने खर्च के रुपये दिये ही होंगे। हृदय में निश्चय था, सब ढोल है। रूह की मालिश कराते उन्होंने किसी बड़े रईस का भी नहीं देखा-सुना।

मेरा दम घुट रहा था। रह रहकर मन में उठता था, पिताजी की तरह दूसरी शादी की बात कहूँ। लेकिन कुल्ली की तरह दिल से बैठ

जाता था। यद्यपि अगाध्याहिक था न जाता इतना पुत्र गाना करता था, फिर भी श्रीमतीजी दिन में दस-बीस बार आती थीं। फिर जाता था एक बात इनकी चार नहीं हो पाती थी और आधुनिक प्रतिभा की तरह जिस स्वर-नाम न हो मुझसे यह बात है, पर दूसरा विवाह इसलिए न करेंगे। पाला मैं उन्हें छोड़ नहीं सकता। बात सही थी। दिन भर विलाप करता था, पर श्रीमतीजी का इतना स्नेह पाकर अनुराग से परिपूर्ण हो जाता। श्रीमतीजी मौन साथ हुए सदा मनोभावों को मारे रहती थीं।

एक दिन मुझसे न रहा गया। हालांकि इसलिए नहीं कि मैं श्रीमतीजी के मनोभाव समझता था बल्कि इसलिए कि श्रीमतीजी मेरे अधिकार में पूरी तरह नहीं आ रही थीं अथवा निश्चय स्वीकार नहीं कर रही थीं। वह समझती थीं कि मैं और जो कुछ भी जानता होऊँ, हिन्दी का पूरा गँवार हूँ, हिन्दी का ऐसा गँवार नहीं, ऐसा पढ़े लिखे सबका पीछे नियामके होता है—बिलकुल राम भरोसे। मुझे श्रीमतीजी की विद्या की थाह नहीं थी।

एक दिन बात बढ़ गयी। मैंने कहा, 'तुम हिन्दी हिन्दी करती हो, हिन्दी में क्या है ?'

उन्होंने कहा 'जब कुछ आती ही नहीं, तब कुछ नहीं है।

मैंने कहा "हिन्दी मुझे नहीं आती ?'

उन्होंने कहा, "यह तो तुम्हारी जबान बतलाती है। बैसवाड़ी बोल लेते हो, तुलसीकृत रामायण पढ़ी है, बस। तुम खड़ी बोली का क्या जानते हो ?"

तब मैंने खड़ी बोली का नाम भी नहीं सुना था। प० महावीरप्रसादजी द्विवेदी, प० अयोध्यासिंहजी उपाध्याय, बाबू मैथिलीशरणजी गुप्त आदि तब मेरे लिए स्वप्न में भी नहीं थे, जैसे आज हैं। श्रीमतीजी पूर उच्छ्वास से खड़ी बोली के एक धुरन्धर साहित्यिकों के बीसियों नाम गिनाती गयीं, जस लेख में उद्धरण पर उद्धरण देखकर पाठक लेखक की विद्वत्ता और विचारों की उच्चता पर दंग हो जाता है, वैसे ही मैं भी खड़ी बोली के साहित्यिकों के नाम मात्र से श्रीमतीजी की खड़ी बोली के

गान पर जहा का वहीं रह गया। अब समझता हूँ, 'महम्मनाम' का प्रभाव इतना क्या है।

मैंने निश्चय किया कि अब यहा मेरी दाल न गलेगी। पाँच छ रोज हो गय। रुह की मालिश नही करायी। सासुजी जैम दिन गिन रही थी, इधर श्रीमतीजी की खडी बोली का ज्ञान दिन पर दिन गालिब हो रहा था। सोचा घर चला जाऊगा। लेकिन मारे प्रेम के स्टेशन की तरफ देखने की इच्छा नहा होती थी। इसी समय किसी एक उपलक्ष म गान का आयोजन हुआ। सासुजी ने एक दिन अपनी पुत्री के सगीत की तारीफ की थी। कहा था 'शहर मे कोई लडकी और औरत मुकाबला नहीं कर सकती।" मैंन सोचा, आज सुन लूगा, चलते चलते श्रवण रन्ध्र सार्थक हो जायेंगे। मज्लिस लगी। ढोलक बजने लगी, लेकिन औरतो की जसी 'उदुम धुमुक' 'दुम धुमुक' नहीं। मैंने सोचा, कुछ आनन्द आयगा—'टिकारा वर्दात ?' पुरुष भी जमने लगे। मनचले, कुछ नहीं, तो दूसरे की औरत का हाथ पैर ही देख लेनेवाल। भीतर से पान आन लग। पान तम्बाकू खाकर एक एक पीक थूकत हुए घर भ्रष्ट करनवाल औरतो की आलोचना करन लगे। गाना शुरू हुआ। श्रीगणेश गजलो से। जो औरत गजल गाना नहीं जानती, उसकी आफत। गजल गानवालियो स प्रभावित अक्सर गजल न जाननवाली पुरानी वृद्धाएँ थी भजन गानवाली, उन पर नवीनाओ का वैसा ही रोब था, जसा आजकल साहित्य और समाज मे देखा जाता है।

मुझे ताज्जुब यह था कि अगरेजो के वक्त ही अँगरेजी इतना अपना ली गयी कि चाल-ढाल बात चीत अदब कायदा, खान-पान, उठक बैठक, हेल व्यवहार, यहा तक कि राजनीतिक विचारो तक म अपना ली गयी, और इतनी जल्दी पर मुसलमानो के वक्त फारसी और हाफिज की गजलो के लिए हमारी देवियो ने इतना देर क्या की, जिस तरह आज की बी० ए० पास देवी धडल्ले स घूमती है अँगरेजी बोलती है, यूरोप म कोर्टशिप करती है पियानो बजाती है, और पिछडी हुई देश की स्त्रियो को शिक्षा देती है उसी तरह हमारी प्राचीनाओ न गजलो को क्यो नहीं अपनाया ? चाहिए तो यह था कि अपनी सास्कृतिक विभूति

अपनी बेटियो को देनी। मालूम हुआ कि वे विचारो मे मार्जित और उदार नही थी, इसलिए उनका सास्कृतिक हाजमा बिगडा था। यह बात राजा राममोहनराय को सबमे पहले मालूम हुई। खैर, अगरेजी अज्ञेया का उद्धार कर, मै तन्मय होकर गजलें सुनने लगा।

गाने के साथ साथ बाहर आलोचना भी चलने लगी—कौन गा रही है, यानी गाना उठाया हुआ किसका है, या साथ साथ कितने ही मँजे और नौसिखिए गले चलते थे। लोग गजलो और गजल गानवालियो को चाहते थे। उनके नमक के कारण, पर उनके चरित्र से उन्हे घृणा थी। अब तक श्रीमतीजी कवि सम्मेलन के बडे कवि की तरह बैठी थी। मुझे नही मालूम था कि लोग एक के बाद दूसरे उन्ही के लिए टूट रहे है। खैर, उन्होने गाया। गनीमत यह कि पहले भजन गाया, वह भी साहित्यिक गीतो का शिरोभूषण—'श्रीरामचन्द्र कृपालु भजु मन हरण भवभय दारुणम।' लोग सास रोककर सुनने लगे। 'कन्दर्प अगणित-अमित छवि-नवनील नीरज सुन्दरम्' की जगह जान पडने लगा, गले मे मदग बज रहा है। मेरा दम उखड गया। यह इतनी है, बगाल मे पाये सस्कार के प्रकाश मे मैं न देख पाया।

इसके बाद एक गजल हुई —'अगर है चाह मिलन की, तो हरदम लौ लगाता जा।' यह त्याग की बारूद भडकी, तो लोगो मे प्रेम पैदा हो गया, बिना जनेऊ तोडे न जाने क्या? एक दूसरे से कनखियो से बातें करने लगे। मैंने सोचा, यह मेरे प्रेम पर हैं, पर फिर शका हुई, क्योकि मैं मिल चुका था। लोग मुस्किराते हुए अपने अपने प्रेम की थाह ले रहे थे।

इसके बाद दादरा शुरू हुआ—

'सासुजी का छोकडा, मेरी ठोढी पे रख दिया हाथ।

बहुत गम खा गयी, नहीं, चाट लगाती दो चार।'

एक श्रोता बहुत बिगडे। बोले, अपने मर्द को चाट लगाती? कैसा ही मर्द होगा।"

उन्हे यह खयाल नही था कि उनका मर्द सामने बैठा है। दूसरे ने मेरी तरफ देखकर मुस्किराकर कहा 'यह मर्द के लिए नही, देवर के लिए है। सासुजी का छोकडा देवर भी हो सकता है।"

से। भगवान जाने इस बीच पिताजी के लिए क्या सोचा हो ! घबराकर बोली, "मेरी बेटी तो भैया, तुम्हे भगवान मानती है । रात का वक्त है, झूठ नही कहूगी, सामने आग जल रही है, मेरे मुह मे आग लगे, तुम कहो, तो मेरी लडकी तुम्हारी बात पर अगार खा सकती है । और, आज ही गाव भर की औरतें आयी थी, उसी की वाहवाही रही, हर बात पर, यो चाहे, जो कहो ।'

'इसी के लिए तो जा रहा हू ।' मैंने कहा ।

सासुजी चौंकी हुई देखने लगीं । मैं फिर बिस्तरा बाधने लगा ।

ससुराल मे बिस्तरा बाधना नाराजगी का कारण है । सासुजी के मन मे आया—रूह नही मँगायी गयी, इसलिए जा रहे हैं । बोली, "दाम नही थे, इसलिए रूह नही मँगायी, कल वह भी आ जाती है ।'

मैंने कहा, 'वह तो बाहरी रूह है, यहा भीतरी फना है ।"

सासुजी प्रश्न भरी चिन्तित दृष्टि से देखती रही ।

मैंने कहा 'पढाई पडी है । फिर तैयारी न कर पाऊँगा ।'

आश्वस्त होकर सासुजी ने नौकर को बुलाया । उसे बिस्तरा बाधने के लिए कहा । मुझसे सस्नेह बोली, "कलकत्ता जा रहे हो, ऐ, मैंने सोचा था, कलकत्ते का बहाना है, घूमकर फिर गाव जाओगे, और गाव मे जबकि प्लेग है, और कलकत्ता पढाई के लिए जा रहे हो, हा, आगे की फिकिर तो करनी ही है ।"

बिस्तरा बँध गया । तागा आया । रायबरेलीवाली गाडी के समय पर सासु और ससुरजी के पैर छूकर मैं बिदा हुआ ।

नौ

पाच साल बीत गये । कुल्ली मुझसे नही मिले कई बार ससुराल गया-आया । मैं भी नही मिला । एक आग दिल मे लगी थी—मैंने हिन्दी नही पढी । बगाल मे हिन्दी का जानकार नही था, जहाँ मैं था—देहात मे । राजा के सिपाही जो हिन्दी जानते थे, वह मुझे माल्म थी—व्रजभाषा ।

का व्यापक अर्थ मुझे मालूम नहीं था। इसीलिए जडाय से मेरा हमेशा छत्तीस का सम्बन्ध रहा। लेकिन विशाल 'अर्थ' जिसके लिए, जिसे न जानकर भी, मैंने अर्थकरत्व छोड़ा था, मेरे विशाल हृदय मित्रों से मुझे प्राप्त होता रहा। पर जब की बात लिख रहा हूं, तब मैं उसी एस्टेट मे एक मामूली नौकर हुआ। चिट्ठी-पत्री, हिसाब किताब अच्छा नहीं लगता था। पर लाचारी थी, इसी समय राजा साहब को अपना थिएटर खोलने का शौक हुआ। बडे आदमी की इच्छा अपूर्ण नहीं रहती। कचहरी के बाबू नायक नट बनने के लिए बुलाये गये। सबके साथ मैं भी गया। मुझे एक बहुत मामूली संस्कृत का गाना दिया गया, इसलिए कि बंगालियों मे अधिकांश संस्कृत का शुद्ध उच्चारण नहीं कर सकते।

मैंने श्लोक याद कर रिहर्सल के दिन गाया। राजा साहब पर उसका बहुत प्रभाव पड़ा। उन्होंने मेरे लिए गाना सीखने का प्रबन्ध कर दिया। धीरे धीरे कला की कृपा से मेरी लोकप्रियता बढ़ चली, साथ दूसरो की ईर्ष्या भी।

इसी समय इनफ्लुएंजा का प्रकोप हुआ। पिताजी एक साल पहले गुजर चुके थे। इसीलिए नौकरी की थी। नहीं तो हर लडके की तरह दुनिया को सुखमय देखते रहने के स्वप्न लिये रहता, कम से-कम लिये रहूँगा, यही सोचता था।

तार आया—'तुम्हारी स्त्री सख्त बीमार है, अंतिम मुलाकात के लिए आओ। मेरी उम्र तब बाईस साल थी। स्त्री का प्यार उसी समय मालूम दिया जब वह स्त्रीत्व छोड़ने को थी। अखबारो से मृत्यु की भयकरता मालूम हो चुकी थी। गगा के किनारे आकर प्रत्यक्ष की। गगा मे लाशों का ही जैसे प्रवाह हो। ससुराल जाने पर मालूम हुआ, स्त्री गुजर चुकी है, दादाजाद बडे भाई देखने के लिए आकर बीमार होकर घर गये हैं। मैं दूसरे ही दिन घर के लिए रवाना हुआ। जाते हुए रास्ते मे देखा मेरे दादाजाद बडे भाई साहब की लाश जा रही है। रास्ते मे चक्कर आ गया। सिर पकडकर बैठ गया।

घर जाने पर भाभी बीमार पडी दिखीं। पूछा, "तुम्हारे दादा को कितनी दूर ले गये होंगे ?' मैं चुप हो गया। उनके चार लडके और एक

दूध-पीती लडकी थी। उस समय बडा लडका मेरे साथ रहता था, बगाल म पढता था। घर म चाचाजी अभिभावक थे। भाई साहब की लाश निकलने के साथ चाचाजी भी बीमार पडे। मुझे देखकर कहा, 'तू यहा क्यों आया ?"

पारिवारिक स्नेह का वह दृश्य कितना करुण और हृदयद्रावक था क्या कहूँ? स्त्री और दादा के वियोग के बाद हृदय पत्थर हो गया। रस का लेश न था। मैंन कहा, "आप अच्छे हो जायें, तो सबको लेकर बगाल चलूँ।'

उतनी उम्र के बाद यह मेरा सेवा का पहला वक्त था। तब से अब तक किसी न किसी रूप स फुसत नही मिली। दादा के गुजरने के तीसरे दिन भाभी गुजरी। उनकी दूध पीती लडकी बीमार थी। रात को उसे साथ लेकर सोया। बिल्ली रात भर आफत किये रही। सुबह उसके प्राण निकल गय। नदी के किनारे उस ले जाकर गाडा। फिर चाचाजी न प्रयाण किया। गाडी गगा तक जैसे लाश ही ढोती रही। भाभी के तीन लडके बीमार पडे। किसी तरह सेवा शुश्रूषा से अच्छे हुए। इस समय का अनुभव जीवन का विचित्र अनुभव है। दखते-देखते घर साफ हो गया। जितने उपाजन और काम करनेवाले आदमी थे साफ हो गय। चार लडके दादा के दो मेरे। दादा के सबसे बडे लडके की उम्र १५ साल मेरी सबस छोटी लडकी साल भर की। चारो ओर अँधेरा नजर आता था।

घर स फुसत पान पर मैं ससुराल गया। इतने दुःख और वेदना के भीतर भी मन की विजय रही। रोज गगा दशन जाया करता था। एक ऊँचे टीले पर बैठकर लाशो का दृश्य देखता था। मन की अवस्था बयान स बाहर। डलमऊ का अवधूत-टोला काफी ऊँचा, मशहूर जगह है। वहाँ गगाजी न एक मोड ली है। लाशें इकट्ठी थी। उसी पर बैठकर घण्टा वह दृश्य देखा करता था। कभी अवधूत की याद आती थी, कभी ससार की नश्वरता की।

एक दिन पूछ-पूछकर कुल्ली वहाँ पहुँच। पहले दुखी थ, मेरे लिए समवेदना लिये हुए थ, देखकर मुस्किरा दिये—बडी निमल मुस्कान। मैंन

देखा—यह सच्चा मित्र है।

कुल्ली ने कहा, "मैं जानता हू, आप मनोहर को वहुत चाहते थे। ईश्वर चाह की ही जगह मार देता है, होश कराने के लिए। आप मुझसे ज्यादा समझदार ह और मैं आपको क्या समझाऊँ ? पर यह निश्चित रूप से समझिएगा, भोग होना है, अच्छा वह है, जिसका अत अच्छा हो।"

मैं अवधूत की कुटी की गडी इटें देख रहा था। कुल्ली ने कहा, "यहा आप क्यो आये हैं ? क्योंकि मृत्यु का दृश्य आपने देखा है। मृत्यु के बाद मन शाति चाहता है। जो मर गये हैं वे भी शाति प्राप्त कर चुके हैं। यह अवधूत टीला है। वहुत पहले यहाँ एक अवधूत रहते थे। वस्ती से यह जगह कितनी दूर है! मरघट से भी दूर है, यानी अवधूत मत्यु के बाद जैसे पहुचे हो। यहा जैसे शाति ही शाति हो।"

कुल्ली की वात वडी भली मालूम दी। वडा सुदर तत्त्व जैसे निहित था। मुझे वडा आश्वासन मिला। ऐसी वात इधर मैंने किसी से नही सुनी थी।

कुल्ली न कहा, "चलिए, रामगिरि महाराज के मठ म दशन कीजिए। आप वहा हो तो आय होगे ' '

मैंने कहा, "नही।'

कुल्ली उठे। उनके साथ मैं भी चला गया।

दस

इसके बाद मैं अपनी नौकरी पर चला गया। कुछ दिन नौकरी करने के बाद एक दुघटना हुई। एक साधु आये। एक पेड के नीचे वठे रहते थे, धूनी रमाये, चिमटा गाडे। मेरी निगाह नये ढग की थी। साधु के सम्बन्ध मे भी निगाह हा गयी थी, स्वामी विवेकानन्दजी और स्वामी रामतीर्थजी की बातें सुनकर, किताबें पढकर। साधु का सम्बन्ध पारलौकिक साधना से हाता है साधना प्राचीन ढग की तरह-तरह की हैं। मैं बिलकुल

आधुनिक था। आदमी सत्य की प्राप्ति के बाद उस पर मनन करने की अपेक्षा नहीं रखता, क्योंकि सत्य स्वयं तब समझ के द्वार पर मिल जाता है। उस पर आधुनिकता और प्राचीनता के नाम का केवल प्रभाव पड़ता है। मैंने जिन साधुओं को पढ़ा था, उन्होंने नशे के विनाश बहुत-कुछ लिखा था। पर जो साधु नशा करते हैं, वे रास्ता पर मारे मारे फिरते हैं। स्वामी विवेकानन्दजी या स्वामी रामतीर्थजी की तरह अंगरेज़ीदाँ नहीं, न अँगरेज़ीदाँ उनके शिष्य हैं, जो गाँजे की चिलम से अड़क जायेंगे। ऊँचे सत्य में विद्या की भी गुंजाइश नहीं रहती —द खतम हो जाता है, लिहाज़ा रास्ता पर घूमनेवाले थकान की प्रतिक्रिया मिटाने के लिए नशा करते हैं। जिस तरह रोग में ज़हर का प्रयोग चलता है उसी तरह जीवन के नाश में, प्रतिक्रिया में वे नशा करते हैं। उनके पास चरित्र का मूल्य है, पर उस चरित्र का अर्थ ऐसा नहीं कि आदमी सात रोज पाखाना न जाय, या पाँच रोज पेशाब न करे, तो सिद्ध है।

अँगरेज़ीदाँ गृहस्थ अँगरेज़ीदाँ साधु ही खोजता है, क्योंकि यूरोप की, अमरीका की बातें होनी चाहिए इस पर उनकी क्या राय है। सत्य के पास यूरोप अमरीका नहीं। रास्तेवाले साधु यहाँ अगरेज़ीदाँ साधुओं को ही धोखा देता हुआ समझते हैं। मैंने कइयों को कहते सुना है, अपना अपना गढ़ बनाये हुए हैं। खैर यह साधु अनेक अर्थों में साधु थे। इनकी इच्छा थी, जगन्नाथजी जायेंगे, किराया मिल जाये। राजा साहब के हाउसहोल्ड सुपरिंटेंडेंट साहब इन पर प्रसन्न थे। उन्होंने राजा साहब से इनकी साधुता की तारीफ करते हुए इनके किराये की प्रार्थना की। राजा साहब ने सुन लिया।

कचहरी हो जाने पर शाम से दस बजे तक मैं राजा साहब के पास रहता था। उन्हें गाने-बजाने का शौक था। अच्छा मृदंग बजाते थे। जाने पर उन्होंने कहा, 'एक साधु आये हैं, देख आओ।'

राजा लोग एक विषय को अनेक मुखों से सुनते हैं, तब राय कायम करते हैं, इसलिए कि उनके कान ही-कान हैं आँखें सब जगह नहीं पहुँचतीं। मैंने राजभक्ति की पराकाष्ठा दिखलाते हुए उसी वक्त कहा, 'हुज़ूर, राजकोष का रुपया इस तरह नहीं खर्च होना चाहिए।'

तब मरे मस्तिष्क मे अनेक तरह थी, जैसी उपयोगितावादी मे होनी है। राजा साहब मुस्किराये। मैं कुछ नही समझा। लेकिन उनकी आज्ञा की उपयोगिता समझता था, क्योकि नौकर था। प्रणाम करके साधु के पास चला। मन मे यह निश्चय लिये हुए कि कोप की एक कौडी नही जानी चाहिए। मन म यह भाव होने के कारण साधु के प्रति रूप कैसा था, कहने की आवश्यकता नही।

मुझे देखते ही साधु ने कहा, "आइए।"

मैंन मन मे कहा, 'यही तो ठग विद्या है।' खुलकर कहा, "तुम काम क्यो नही करत ?"

साधु ने मुझे 'आप' कहा था, मैंने 'तुम' कहा, तब मुझे यह नही मालूम था—ईश्वर की प्राप्ति के लिए निकला हुआ मनुष्य ईश्वर प्राप्ति के बाद दम्भ कम हो जाता है। उसके मन मे केवल ईश्वर रहता है।

साधु ने कहा, "मैं 'आप' कहता हू, आप 'तुम' कहते हैं। मैं क्या काम करूँ ?'

मेरी 'आप' कहने की प्रवृत्ति नही हुई। मैंने कहा, "तुम्हे ससार मे काई काम ही नही मिलता ?'

साधु ने कहा, "आप फिर 'तुम' कहते हैं। यह सब काम कौन करता है ?"

मुझे मालूम हुआ, यह पूरा ठग है। क्योकि लिखी किताबो मे साधुओ के हथकण्डे और तरह-तरह की शिकायतें पढी थी। कहा, "तुम्हे रुपया नही मिलेगा।"

साधु ने कहा, "होश मे आ।" और चिमटा जोर से जमीन म गाड दिया।

मुझे मालूम हुआ, वह चिमटा मेरे सिर मे समा गया। गदन झुक गयी। लेकिन मुझमे मामूली आग रही थी। मेरा अभिप्राय असत्य था। फिर भी साधु के प्रति श्रद्धा न निकली।

साधु ने जैसे सिर पर सवार होकर पूछा, "तू राजा है ?"

जो अपराध मैं कर रहा था, वही साधु करने लगे, क्योकि मैंने साधु को 'तू' नही कहा था, 'तुम' कहा था। पर अभी मैं अपने को सँभाल

रहा था, जैसे लडनेवाला नीचे चला गया हो, हार न खायी हो। सँभल-कर कहा "नही, मैं राजा नही हूँ।"

साधु व्यंग्य कर रहा था, उसका राजा का अर्थ, राम था, मेरा केवल सीधा, वही राजा, जहाँ से मैं आया था।

साधु ने कहा, "तू नौकर है, तो नौकर की तरह बातें क्यों नही करता?"

साधु फिर भूला। नौकर भी राम है। खास तौर से मैं महावीर को अधिक प्यार करता था, राम को कम।

साधु चाहता था मैं अपनी पकड छोड दूँ तो वह हाथ दे दे, लेकिन मेरी पकड में नौकर नही था, साक्षात् महावीर थे। पकड छुडाने के लिए साधु ने कहा "तेरी नौकरी नहीं रहेगी।"

अगर मैं वहाँ करण हुआ होता, तो साधु ने बाजी मारी होती। मैंने कहा, "महाराज, तब तो मैं बच जाऊँ। यह महावीर की ही वाणी थी राम के प्रति। तब मैं यह कुछ नही जानता था।

साधु के होश उड गये। यह नौकरी के लिए आग्रह नही था, फिर मेरे सिर उतने बच्चो का बोझ था।

साधु रोने लगे। कहा, "अरे, तेरे लिए मैंने घर-बार छोड दिया, और तू मुझे सताता फिरता है?"

अब मैं भी समझा। मुझे ज्योति भी दिखी। पहले जुही की कली लिखते वक्त दिखी थी, तब नही समझा था। अबके एक साधु ने पहचान करा दी।

मैं चलने लगा, तो साधु ने कहा 'तो चलो चलें।"

लेकिन मैंने ससार की तरफ खीचा, क्योंकि ज्ञान के साथ कर्म काण्ड जो बाकी था, उसकी ओर आकर्षण हुआ। इस समय साधु को वैसा ही कष्ट हुआ जैसा मुझे हुआ था। बडी ही करुण ध्वनि की, जैसे बदन टूट रहा हो।

राजा साहब के पास गया, तब सब भूल गया, जड राजा का भूत सवार हो गया। राजा साहब ने पूछा, "कैसे साधु है?" मैंने कहा, "ऐसे आदमी को रुपये नही देने चाहिए।" राजा साहब चुप हो गये।

सुबह सुपरिटेंडेंट साहब फिर आये, और बीस रुपये की मजूरी करा ली। रुपये लेकर सुपरिटेंडेंट साहब गये। पर हाय जा बढे, वे दम्भ के हाथ थे। साधु ने कहा, "मैं रुपये नही लूगा। कल राजा आये थे। मैंने उन्हे नाराज कर दिया है। मैं जाता हूँ।" कहकर अपना चिमटा वही फेंक दिया, और चले गये।

सुपरिटेंडेंट साहब ने रास्ता रोककर कहा, "महाराज, वह राजा नही था, वह तो एक मामूली नौकर है।"

साधु ने कहा, "तू नही समझता, वह राजा था।"

सुपरिटेंडेंट साहब मुह फैलाकर देखने लगे। साधु चले गये।

कुछ देर बाद मैं भी उस रास्ते से गुजरा। सुपरिटेंडेंट साहब न कहा, 'तुमने कल साधु से क्या कहा था—मैं राजा हूँ ?"

"नही दादा", मैंने कहा, "मैंन ऐसा तो नही कहा।"

सुपरिटेंडेंट मुझसे भी बडे राजभक्त थे। कहा, "तुमने कहा है। साधु ने रुपये नही लिये, अपना चिमटा फेंककर चला गया। मैं महाराज स अभी रिपोट करता हूँ।"

कौन समझता है, वह निश्छल नत जन विश्व के सामन नत है—वह दादा कहनेवाला और है। यह सलाम करनवाला नही।

दादा ने राजा साहब से रिपोट की, बडे उदास शब्दो मे। सुनी बात पर जैसी अतिशयोक्ति होती है।

मेरे जाने पर सस्नेह राजा साहब ने कहा "तुमन साधु से कहा था—मैं राजा हू ?"

उत्तर उस तरह मुझसे न दत बना, जिस तरह दना चाहिए था क्योंकि मैं भी राजा को साक्षात पुरुषोत्तम नही देख रहा था। कहा, "हा, मैंने कहा, राजा का नौकर राजा नही ता क्या है ?"

यह अद्वैतवाद राजा समझते थे। भारत की नौकरशाही का यही अथ है।

उस समय के लिए निष्कृति मिली। कठिन ससार की उलझन साथ ही थी। एक दिन मैं राजा साहब के यहा से अपन डेर जा रहा था, रात के ग्यारह बजे होग। सुपरिटेंडेंट साहब कचहरी नही गये थे। लेकिन

हाथीखाने के पास, जो जगह उनके मकान से मील भर है, मुझे मिले। वह शराब पीते हैं, यह मशहूर बात थी, शराब पीनेवाला और भी बहुत-कुछ करता है। ससार का अपना एक चरित्र है—दिखाऊ। उसके प्रतिकूल कुछ होने पर घबराहट होती है। सुपरिंटेंडेंट साहब को रात ग्यारह बजे देखने के साथ मैं चौंका, वह भी चौंके। वह मेरी शिकायत कर चुके थे, इसलिए भी। मैं चौंका, वह यहा इतनी रात को क्या कर रहे हैं। चौंका चौकी के साथ मुझे शराब की बू मालूम दी। पर मैं चुपचाप चला गया।

दूसरे दिन कथा प्रसग पर मैंने राजा साहब से कह दिया, पर शिकायत के तौर पर नही, मजाक के तौर पर। सुपरिंटेंडेंट साहब पीते हैं, यह सब लोग जानते थे राजा साहब और बहुत जानते थे। हँसने लगे।

पर बड़े आदमी कहलानेवाले लोग अपने मातहत रहनेवालों या नौकरों से तरह-तरह से पेश आते हैं। एक दिन एकाएक मुझे हुक्म हुआ, '*गोपालजी के मंदिर मे जाकर कसम खाकर कहो, तुमने सुपरिंटेंडेंट साहब* को शराब की हालत में देखा है।"

सुपरिंटेंडेंट साहब का हुक्म हुआ, "तुम कहो, मैंने नही पी।'

सुपरिंटेंडेंट साहब ससारी आदमी थे। एक गवाह ठीक कर लिया था—फीलवान, यह कहने के लिए कि सुपरिंटेंडेंट साहब के लड़के को भूत लगा था, वह फूक डालने गया था। उसे हुक्म हुआ, वह कुरान लेकर कहे।

कसम के दिन फीलवान नही गया। हम दोनों गये। मैंने जसी सुगध पायी थी, उसके लिए कसम खायी। सुपरिंटेंडेंट साहब बिलकुल डकार गये।

कसमी कसमा हो जाने के बाद मैंने इस्तीफा दाखिल किया। राजा साहब को एक निजी पत्र लिखा मेरे धर्म स्थल पर हस्तक्षेप करने का आपको कोई अधिकार न था। फिर मैंने सुपरिंटेंडेंट साहब की नौकरी लेने के लिए नही कहा था।'

सुपरिंटेंडेंट साहब ने उन्हें यही समझाया था कि उस साधु के सम्बन्ध में चूँकि उन्होंने सही सही बातें कही हैं इसलिए उनकी नौकरी लेने के अभिप्राय से मैंने यह जाल रचा है। अब जबसे हुजूर ने वह सब काम

छोड दिया है, तबसे हुजूर की बराबर अनुवर्तिता वह कर रहे हैं, इसीलिए हुजूर ने गुरुमन्त्र लेने की बात भी कही थी। गुरुमन्त्र का प्रभाव होता ही है।

मेरा इस्तीफा मजूर न किया गया। राजा साहब की चिट्ठी आयी, "यो ध्रुवाणि परित्यज्य अध्रुवाणी निषेवते।"

मैंने कहा, "अध्रुव की ही सेवा सही, मेरी तनख्वाह दे दी जाय मेरा काम समझ लिया जाय।"

नौकरी छोड दी। कई लोग, यहा तक कि असिस्टेंट मैनेजर साहब, जिन पर रोज रिश्वत का इलजाम लगता था, मिलने पर कह गये, "यहा तुम्ही एक आदमी हो। बहुतो ने झुकी कमर सीधी कर-करके देखा।" मैंने अपनी चीजें नीलाम करके, एक भतीजे को साथ लेकर गाव का रास्ता लिया।

गाव पहुचकर ससुराल गया। देश मे पहला असहयोग आदोलन जोरो पर था। खलिहानो म बैठे हुए किसान जमीदारो से बचने के लिए रह-रहकर 'महात्मा गाधीजी की जय' चिल्ला उठते थे। कुछ अति आधुनिक सरकारी नौकर, जमीदार और पुलिस के आदमी मजाक करते थे—तरह-तरह के अपशब्द। कुछ अकर्मण्य मालदार राजनीतिक विद्वान अखबारो का उलथा कर-कर टीका टिप्पणी के साथ समाज मे चर्चा करते हुए पाचन शक्ति बढा रहे थे। ऐसे ही एक ने मुझसे कहा, "महात्माजी ने सिद्ध कर दिया है चर्खा चलाने से कम से कम रोटिया चल सकती है।"

मैं बेकार था। 'सरस्वती' से कविता लेख वापस आते थे। एक आध चीज छपी थी। 'प्रभा' मे, मालूम हुआ, बडे बडे आदमियो के लेख-कविताए छपती हैं। एक दफा ऑफिस जाकर बातचीत की, उत्तर मिला, इसमे 'भारतीय आत्मा', 'राष्ट्रीय पथिक' मैथिलीशरण गुप्त जैसे कवियो की कविताएँ छपती हैं। ऐसे ही कुछ लेखको के नाम सुने। मुह लटकाकर लौट आया। जीविका का कोई उपाय न था। चार भतीजो की परवरिश सिर पर। जिन सज्जन ने चर्खे की उपयोगिता समझायी थी, उन्ह एक तकुआ खरीद लाने के लिए पैसे दिये थे, वह कानपुर गये थे। यहा मेरे गाँव के पडोस मे कोरी बुनाई का काम करते हैं मैं सीखने के लिए रोज

जाने लगा। कोरिया ने कहा, "तुम महाराज होकर क्या यह काम करोगे? अरे, कहीं भागवत बाचो।"

वह सज्जन कानपुर से लौटे, बोले, "जल्दी में था, खरीदने की याद नहीं थी।"

मन मे अत्यधिक उथल पुथल थी। इसी समय कन्यादायग्रस्त भी आ आकर घेरते थे। वणनो मे किसी की कन्या इन्दिरा से कम न थी। बड़ा गुस्सा आया। ससुराल चला गया। कन्यादायग्रस्तो की सख्या वहा और अधिक दिखी। एक दिन गगा के किनारे बठा था। टहलते हुए कुल्ली आये। समय का प्रभाव कुल्ली पर बहुत पडा था। चेहरे से सभ्य राजनीतिक हो गये थे। मुझे देखकर उसी ढग से नमस्कार किया। पहले की अदालतवाली सभ्यता अब राजनीतिक सभ्यता मे बदली है मैंने देखा। मै बैठा था। कुल्ली ने सोचा, मैं कोई महान् राजनीतिक कर्मी हू। इधर कुल्ली अखबार पढने लगे थे। त्याग भी किया था, अदालत के स्टाम्प बचते थे, बेचना छोड दिया था। महात्माजी की बातें करने लगे। मैं सुनता रहा। जब कुछ पूछते थे तब जितना जानता था कहता था।

एकाएक भाव म उमडकर कुल्ली ने कहा, "मुझे कुछ उपदेश दीजिए।

मै जला हुआ था ही। कहा 'गगा मे डूब जाइए।'

"यह आप क्या कह रहे हैं?" पूरे राजनीतिक आश्चर्य म आकर पूछा।

"आप डूब सकते हैं या नहीं?'

'डूब कैसे जाऊँ? कोई मतलब की बात भी हो?"

'मतलब की बात मुझे नही आती।

'तो आप बे मतलब यहा बैठे हुए हैं?"

"हाँ, इतना ही मतलब था। आपसे मिलने के मतलब से तो नहीं आया था?"

कुल्ली मेरी ओर देखते रहे। उन्हे नही मालूम था, इनके चारो ओर आग लगी है। चुपचाप उठकर चले गये।

अनेक आवतन निवतन के बाद मैं पूण रूप से साहित्यिक हुआ। कुछ ही दिनो मे कविता-क्षेत्र म जैस चूहे लग जायें, इस तरह कवि किसाना और जनता जमीदारा मे मेरा नाम फैला। साल ही भर मे इलाहाबाद के श्रीहप और कलकत्ते के कालिदास हिन्दी के काव्य का उद्धार करने के लिए आ गये, एक ही समय म। पुराने स्कूलवाला ने अपनी मोचाबन्दी की और लडाई छेड दी। पर हार पर हार खात गये, कारण, बुद्धि की बारूद नही थी। एयरगन की फुट्टफैर होकर रह गयी। इस तरह अब तक अनक लडाइयाँ हुइ। पर नये लडनेवाला से लडने पर पुरान बराबर हारे हैं।

अस्तु, हिन्दी के काव्य साहित्य का उद्धार और साहित्यिको के आश्चय का पुरस्कार लेकर मैं गाव आया। गाव से ससुराल गया। कुल्ली मिले। अखबार पढते थे। अखबारो मे मेरा नाम, आलोचना आदि मे पढ चुके थे, जाने पर बडी आव भगत उन्होने की। एकटक देखत रहे। अब उनका वह प्रियजन विकास पर है। इस बार अपने घर के जितने कविया की चचा की, सबको उतारकर, क्योकि अखबारो म उनकी वैसी आलोचना नही छपती थी, फिर वे राजा के आश्रित थे।

–कुल्ली ने मुझे देखते हुए आवेग स पूछा, "आपन दूसरी शादी नही की ?"

मैंने कहा, "करने की आवश्यकता नही मालूम दी।'

पूछा, "रहते किस तरह हैं ?'

उत्तर दिया, "एक विधवा जिस तरह रहती है।"

कुल्ली, 'विधवाएँ तो तरह-तरह के व्यभिचार करती हैं।'

मैं—"तो मैं भी करता हूँगा।'

कुल्ली बहुत खुश हुए। कहा, "लेकिन पाप होता है।'

मैं—"पुण्य के साथ साथ पाप हो, तो डर नही। कहा है—एक अगारा पहाड भर भूसा जला सकता है।'

कुल्ली जमे। पूछा, "समाज के लिए आपके क्या विचार हैं ?"

"जो कुछ मैं कह गया," मैंने कहा, "इसी का नाम समाज है। जो कुछ बहता है, उसम हमेशा एक सा जलत्व नही रहता।"

"आप हिंदू मुसलमान के सम्बन्ध मे क्या कहत हैं ?"

मैं—'हिन्दू मुसलमान बन सकता है, मुसलमान हिंदू नही।"

कुल्ली बहुत खुश हुए। उनके दिल की बात थी। उनका इतिहास मुझे मालूम न था, लेकिन वह अपने जीवन के अनुभव और सत्य को मुझमे मिला रह थ। पूरा उतरता देखकर कहा, "एक मुसलमानिन है। मैं उसस प्रेम करता हू। वह भी मरे लिए जान दती है। ले चलने को कहती है, पर यहाँ के चमारा मे डरता हूँ।'

मैंन कहा "चमारा से सभी डरत हैं, लेकिन जूत गाँठन के लिए देत रहने पर दब रहत हैं चमार।'

"तो आपकी राय है, ले आऊँ ?"

मैं कलकत्ते का हिंदू मुस्लिम दगा देख चुका था। उन दिना अखबारा मे यही चर्चा थी। बाजे के प्रश्नोत्तर चल रहे थे। इसी पर मुशी नवजादिकलाल साहब महादेव बाबू को चार महीने की सख्त सजा दिला चुके थे। छूटने पर मैं स्वागत करा चुका था। समय का रग सब पर रहता है लडकपन हो, जवानी। मैंने पूरी उत्तेजना से कहा, "अवश्य ले आओ।

कुल्ली म जैसे स्वर्गीय स्पिरिट आ गयी। उदात्त स्वर स बोले, 'य हिन्दू नामद हो गय हैं। दूसरे को भी नामद करना चाहत हैं।'

आप इनके सामन आदश रखिए।' मैंने कहा।

कुल्ली झटके से उठे उसी वक्त आदश रखने के विचार से, और सीधे उसी प्रिया के घर गये उसे ले आने के लिए।

बारह

इन दिना मैं लखनऊ रहने लगा था। सविनय अवज्ञा आन्दोलन समाप्त

हो चुका था। अछूतोद्धार की समस्या थी। इसी समय दलमऊ गया। कुल्ली की पूण परिणति थी। राजनीति और सुधार दोनों के पूण रूप थे। आदोलन का केन्द्र रायबरेली था, तब कुल्ली काफी भाग ले चुके थे। पहले नमक-कानून दलमऊ मे तोडा जानेवाला था, तब कुल्ली ने ही खबर दी थी कि पुलिस गोली चलाने की तैयारी मे है। तब कार्यकर्ता दलमऊ से हटकर रायबरेली चले गय थे, ताकि पुलिस को तकलीफ न हो। अदालत जानेवाले वकीलो, पुलिस के नौकरो, सरकारी अफसरो, पण्डो, पुरोहितो, जमीदारो और ताल्लुकदारो से घणा करन लगे थे। प्रसगवश ब्राह्मणो स भी घणा करने लगे थे।

कुल्ली एक अच्छे-खासे नेता की तरह मिले। मिलते ही पूछा, "आपके उधर कैसा काय है ?"

मैंने ताज्जुब से पूछा, "कौन-सा काय ?"

"यही, जो चल रहा है।' कुल्ली ने भी आश्चय से मुझे देखते हुए कहा।

"राजनीतिक ?' मैंने सीधे-सीधे पूछा।

"हाँ, यही आदोलनवाला।" कुल्ली कुछ कट हुए बोले।

"अब तो समाप्त है।'

इससे कुछ होगा ?"

'किससे क्या होता है, क्या मिलता है, क्या जाता है, यह मैं नही जानता, इसलिए मानना भी नही, कुछ मेरी भी सुनी सुनायी, पढी-पढायी बातें हैं, उन्ही म कुछ नमक मिच अपनी समझ से मिलाकर।'

कुल्ली खुश हो गये। एक भेड बनता है, तो दूसरा भेडिया बनन का हौसला दबा नही सकता। इसीलिए अब तक दीनता और दीन की ही ससार के लोगो ने ऊँचे स्वर स तारीफ की है। मैं साधारण आदमी हूँ इसने कुल्ली को असाधारणता का बोध तत्काल करा दिया। मुझम कहा, 'मैं उसे ले आया।'

किसे ?'

'उसी मुसलमानिन को।'

"तब तो मेरी पहली बात तुमने मान ली। मैंने कहा था, तुम गगा

में कूद पड़ा, तुम मुझे लोग समटे हुए ही उस वक्त देख पड़े थे।"

कुल्ली ने आश्चर्य से कहा, "गंगा में मैं सकूदा ?"

"किताब में स्त्री को नदी कहा है। नदियों में गंगा श्रेष्ठ है। तुम श्रेष्ठ स्त्री से आये हो।"

कुल्ली प्रसन्न हो गये। बोले, 'लेकिन एक बात है, यहाँवाले मानते नहीं।'

जब जानेंगे, तब मानेंगे।" मैंने कुल्ली की छड़ी देखते हुए कहा, 'किसी को यह मालूम नहीं कि यह छड़ी नहीं।'

कुल्ली ने भी अपनी छड़ी देखी, और मुस्किराकर कहा, "लोग सताते हैं। पथवारी-देवी के देखने के लिए भेजा था, लोगों ने मन्दिर के दरवाज़े पर भी नहीं जाने दिया।

'तुम्हें समझना था देवीजी ने कृपा की, जाने दिया, क्योंकि वह मन्दिरवाली नहीं थीं, पथवाली थीं।"

'अच्छा !" कुल्ली बहुत खुश हुए। कहा "इसलिए पथवारी कहते हैं !' नम्र होकर बोले, "मेरा नाम भी पथवारीदीन है।"

"तब ?" मैंने कहा, 'और पथवारी देवी उसे क्या देती ?"

"आप बहुत-बहुत बड़े ज्ञानी हैं' कुल्ली ने हाथ जोड़कर मुँह,के सामने हाथी की सूँड उठायी। मैंने मन में कहा, 'देखो, अब कौन ज्ञानी है।

देखो कुल्ली', मैंने कहा "गणेशजी जितने ज्ञानी हैं मैंने सुना है, उतने ही मूर्ख हैं। बंगाल में हस्तिमूर्ख कहते हैं यानी हाथी की तरह का मूर्ख, इससे बड़ा मूर्ख दूसरा नहीं। एक दफा मेरे एक दोस्त जंगल में शिकार खेलने गये थे। एक शेर मारा। मारकर पत्तों से ढककर उसे नीचे डालकर फिर मचान पर जा बैठे कि एक आध हिरन आ जाय, तो मारकर खाने का भी इन्तज़ाम कर लें। इत्तिफाक, आया हाथियों का झुण्ड। जंगली हाथी सबसे खतरनाक है। क्योंकि वह हिलाकर पेड़ से भी आदमी को फल की तरह गिरा लेता है, या डाल तोड़कर नीचे लाता है। मेरे मित्र पक्के शिकारी थे। उन्हें यह सब मालूम था। मचान कुछ ऊँचा था। हाथियों के नायक के सूँड बढ़ाते ही उन्होंने अपनी

बन्दूक नीचे डाल दी, ठीक उसी जगह, जहा शेर मारा ढका था। हाथी बन्दूक लेकर तोडने लगा। तब तक मेरे मित्र और ऊची डाल पर चले गये। बन्दूक तोडकर पत्तो से ढकी चीज को देखने की उत्सुकता मे हाथी ने सूड बढायी। पत्ते खोलते ही शेर दिखा। हाथी बेतहाशा भागा, उसके साथी भी भगे। मित्र बच गये यद्यपि यह एक सयोग की बात थी पर इसमे शिक्षा की कमी नही। जहा हाथी सताते हो, वहा शेर की खाल काम देती है। बुद्धि इसीलिए सबसे ऊपर है।"

कुल्ली समझ गये कि कहनेवाला और जो कुछ हो, बेवकूफ नही। बोले, 'अछूत पाठशाला खोली है। तीस चालीस लडके आते है, धोबी, भगी, चमार, डोम और पासियो के। पढाता हू। लेकिन यहा के बडे आदमी कहे जानेवाले लोग मदद नही करते। यहाँ के चेयरमैन साहब के पास गया, वह जबान से नही बोले हालाकि शहर के आदमी हैं। टाउन-एरिया मे सिर्फ कुछ घर है। बाकी गगापुत्रो की वस्ती है। ये लोग उदासीन हैं। कुछ सरकारी अफसर है, व भडकाया करते है। कैसे काम चले? मदद कही स नही मिलती। जो काम करता था, आदोलन मे छोड दिया। अब देखता हू, उसी गधे पर फिर चढना होगा।"

मैंने सोचा, 'यह काय की बात है, रस की नही। जिन्हे काय करना है, वे अपना रास्ता खोज लेंगे। जरा कुल्ली से एक चोट कसकर मजाक क्यो न किया जाय। जहा तक रस मिले पान करना चाहिए, आर्यों की सतान हू, सामरस के अभाव मे ताडी का प्रयोग प्रशस्त है, काका कालेलकर साहब ने समझा दिया है। प्रकृति को पर्दे मे रखना दुनिया के आदमियो का काम है। जिन्हे कही खुला नजर आयेगा आप रुकेंगे।"

खुलकर पूरे एमोशन के साथ कहा "महात्माजी को लिखिए।

कुल्ली मे इतना उच्छ्वास आया, जस उनकी अर्जी मजूर हो। पूछा, "महात्माजी का पता क्या है?" मैंने पता बतला दिया।

नोटबुक निकालकर कुल्ली नोट करते रहे। फिर सिर उठाकर मुझसे पूछा, "महात्माजी के अलावा और भी किसी को लिखना चाहिए?" जैसे न्योता भेज रहे हो।

"हा', मैंने कहा, "प० जवाहरलाल नहरू को।"

फिर सिर झुकाकर लिखते हुए पूछा, "आनन्द भवन, इलाहाबाद ?"

"या स्वराज्य भवन, इलाहाबाद।" मैंने कहा।

कुल्ली ने लिख लिया। फिर निश्चिन्त होकर मुझसे कहा, "एक रोज हमारे यहाँ चलिए, आपको सबकुछ दिखाऊँ, अपनी भौजी को भी देखिए।"

"सावली है—गोरी ?" मैंने जल्द उत्तर पाने की गरज से पूछा।

कुल्ली मुस्किराये। कहा, "अपनी आँखों देखिए।"

"कुछ योग्यता ?" मैंने बिलकुल आधुनिक फैशन के आदमी की तरह पूछा।

कुल्ली गम्भीर होकर बोले, "बहुत अच्छी रामायण पढ़ती हैं। अभी गयी थीं" राजा साहब या रानी साहब, शिवगढ़, या किसे कहा "पढ़कर सुनायी, उन्हें बहुत खुशी हुई।

पूछना चाहता था, सिर्फ खुशी रही या बख्शिश भी मिली, लेकिन स्त्री और सभ्यता का विचारकर रह गया।

कुल्ली ने पूछा, "तो पाठशाला देखने कब आइएगा ?"

अछूतों का मामला, यहाँ चालाकी नहीं चलेगी, सोचकर मैंने कहा, "जब आप कहें आऊँ। मैं समझता हूँ परसों ठीक होगा, क्योंकि आप लड़कों को खबर भेज दे सकेंगे, उस रोज अधिक से अधिक लड़के हाजिर हो सकेंगे।"

नमस्कार कर कुल्ली बिदा हुए।

मैं श्रीमती मुखोपाध्याय के यहाँ गया। ये स्त्रियों की चिकित्सा, प्रसव आदि के लिए खास तौर से नियुक्त सरकारी डाक्टर थीं। इनके पति मुखोपाध्याय महाशय उस समय बंगाल से आकर यहीं रहते थे। श्रीमती मुखोपाध्याय उनकी दूसरी या तीसरी पत्नी थीं। ईश्वर की कृपा से उनके एक पुत्र और सात आठ कन्याएँ थीं। जब कन्याओं को लेकर गंगा नहाने जाती थीं तब देखनेवाले को 'व्वायज टु लिलिपुट' याद आ जाता था। मुखोपाध्याय महाशय सन्दिग्ध-स्वभाव के आदमी थे। कोई भी सरकारी अफसर लेडी डाक्टर से मिलने जाता या तब वह सन्देह करने लगते थे, पति पत्नी में अक्सर तकरार चलती थी,

पर वृद्ध मुखोपाध्याय मुश्किल से एक रात पूरी उतार सकते थे। मनचले आदमी समझ गये थे, इसलिए सबेरे ही कोई-न कोई पहुचते थे।

मेरी उनकी इस तरह जान पहचान हुई कि मेरे एक सम्मान्य मित्र के यहाँ वह जाया करत थे। मित्र कान्यकुब्ज हैं, साथ सुप्रसिद्ध। वह मुखोपाध्याय महाशय को उतना ही बडा मानते थे, जितना बडा कलकत्ता-बम्बईवाले हिंदोस्तानियो को मानत है। मुखोपाध्याय महाशय दुखी होते थे। एक दिन मैंने यह दृश्य देखा, तो आमन्त्रित करके इन्हे खिलाया। तब से इनके यहा कभी-कभी जाया करता था। मवेशी डॉक्टर भी बगाली थे। वहा प्राय रोज जाते थे। मुसलमान सब तहसीलदार साहब भी जाते थे। मैंने कुल्ली के सम्बन्ध म पूछा, तो सबको नाखुश पाया। कहा, "यह इतना अच्छा काम कर रहे हैं, आप इनसे सहानुभूति क्यो नही रखते ?"

लोगो न कहा, "अछूत-लडको को पढाता है, इसलिए कि उसका एक दल हो, लोगो से सहानुभूति इसलिए नही पाता, हक्की है, फिर मूख वह क्या पढायेगा ? तीन किताब भले पढा दे। ये जितन काग्रेसवाले हैं, अधिकाश मे मूख और गँवार। फिर कुल्ली सबम आग है। खुल्लम-खुला मुसलमानिन बैठाये है। उस शुद्ध किया ह, कहता ह अयोध्याजी जान कहा ले जाकर गुरु म त्र भी दिला आया है। पर आदमी आदमी हैं, जनाब, जानवर थोडे ही हैं ? कान फुकाने से विद्वान, शिक्षक और सुधारक होता है ? देखो तो, बीबी तुलसी की माला डाले है। दुनिया का ढोंग।"

तीसरे दिन कुल्ली आये। बडे आदर स ले गय। देखा, गडह के किनारे, ऊँची जगह पर, मकान के सामने एक चौकोर जगह है। कुछ पेड हैं। गडह के चारो ओर के पेड लहरा रहे हैं। कुल्ली के कुटी-नुमा बँगले के सामने टाट बिछा है। उस पर अछूत लडके श्रद्धा की मूर्ति बन बैठे हैं। आखो से निमल रश्मि निकल रही है। कुल्ली आनन्द की मूर्ति, साक्षात् आचाय। काफी लडके। मुझे देखकर सम्मान प्रदशन करते हुए नतशिर अपने अपने पाठ मे रत हैं। बिलकुल प्राचीन तपोवन का दृश्य। इनके कुछ अभिभावक भी आये हैं। दोना मे फूल लिये हुए मुझे भेंट करने

के लिए। इनकी ओर कभी किसी ने नहीं देखा। य पुश्त दर पुश्त स सम्मान देकर नत मस्तक ही ससार से चले गये हैं। ससार की सभ्यता के इतिहास म इनका स्थान नही। य नहीं कह सकते, हमारे पूवज कश्यप, भरद्वाज, कपिल, कणाद थे, रामायण महाभारत इनकी कृतिया हैं अथशास्त्र, कामसूत्र इन्होने लिखे हैं, अशोक, विक्रमादित्य, हर्षवद्धन, पृथ्वीराज इनके वश के हैं। फिर भी ये थे, और है।

अधिक न सोच सका। मालूम दिया, जो कुछ पढा है, कुछ नही, जो कुछ किया है व्यथ है, जो कुछ सोचा है, स्वप्न। कुल्ली धन्य है। वह मनुष्य है इतने जम्बुकों म वह सिंह है। वह अधिक पढा लिखा नहीं, लेकिन अधिक पढा-लिखा कोई उससे बडा नहीं। उसने जो कुछ किया है, सत्य समझकर। मुख मुख पर इसकी छाप लगी हुई है। ये इतने दीन दूसरे के द्वार पर क्या नही देख पडते? मैं बार बार आसू रोक रहा था।

इसी समय बिना स्तव के बिना मन्त्र के, बिना वाद्य, बिना गीत के, बिना बनाव, बिना सिंगारवाले वे चमार, पासी, धोबी और कोरी दोने मे फूल लिय हुए मेरे सामने आ आकर रखने लगे। मारे डर के हाथ पर नहीं दे रहे थे कि कहीं छू जाने पर मुझे नहाना होगा। इतने नत। इतना अधम बनाया है मेरे समाज ने उन्ह।

कुल्ली न उन्ह समझाया है, मैं उनका आदमी हू उनकी भलाई चाहता हू, उन्ह उसी निगाह से देखता हूँ, जिसस दूसरे को। उन्ह इतना ही आनन्द विह्वल किय हुए है। बिना वाणी की वह वाणी, बिना शिक्षा की वह सस्कृति, प्राण का पदा-पर्दा पार कर गयी। लज्जा से मैं वहीं गड गया। वह दृष्टि इतनी साफ है कि सबकुछ देखती समझती है। वहाँ चालाकी नहीं चलती। ओफ! कितना मोह है! मैं ईश्वर सौन्दय, वैभव और विलास का कवि हूँ!—फिर क्रातिकारी!!

सयत होकर मैंने कहा, 'आप लोग अपना अपना दोना मेरे हाथ म दीजिए, और मुझे उसी तरह भेंटिए, जस मेरे भाई भेंटते हैं।" बुलाने के साथ मुस्किराकर व बढे। वे हर बात में मेरे समकक्ष हैं जानने हैं। घृणा से दूर हैं। वह भेद मिटते ही आदमी-आदमी मन और आत्मा स

मिले, शरीर की बाधा न रही।

इस रोज मैं और कुछ नही कर सका, देखकर चला आया, कुछ लडको से कुछ पूछकर।

तेरह

दूसरे रोज कुल्ली आये। नमस्कार-प्रणाम आदि के बाद बैठे। कहने लगे, "अछूत-पाठशाला खोलने के बाद से लोगो की रही सहानुभूति भी जाती रही। क्या कहूँ, आदमी आदमी के लिए जरा भी सहनशील नही। वह अपने लिए सबकुछ चाहता है, पर दूसरे को जरा भी स्वतन्त्रता नही देना चाहता। इसीलिए हिन्दोस्तान की यह दशा है, मैं समझ गया हूँ।"

मैंने कहा, कुछ सरकारी अफसरो से मेरी मुलाकात हुई थी। वे आपसे नाराज है, इसलिए कि आप यह सब करते है। शायद आपसे उन्हे इज्जत नही मिलती। वे नौकर होकर सरकार है यह सोचते है, आप उन्हे याद दिला देते हैं, वे नौकर है, उन्हे रोटिया आपसे मिलती है।"

कुल्ली हसे। कहा, "और भी बातें हैं। भीतरी रहस्य का मैं जानकार हू, क्योकि यही का रहनेवाला हू। भण्डा फोड देता हू। इसलिए सब चौंके रहते हैं। वह मेम है, सरकार की तरफ से नौकर है, लेकिन बच्चा होआने जाती है, तो रुपया लेती है, और एक की जगह दस दस, मैंने एक धोबिन को कहा, बुलाये और रुपया न दे, ज्यादा बातचीत करे, तो देखा जायगा। धोबिन ने ऐसा ही किया। मेमसाहब नाराज हो गयी। यही हाल मवेशी डाक्टर का है। मुसलमान इसलिए नाराज हैं कि मुसलमानिन ले आया हू। अरे भई, तुम्ही गाते हो—दिल ही तो है न सगो खिश्त दर्द से भर न आये क्या? फिर नाराज क्यो होते हो? क्या यह भी कही लिखा है कि दिल सिर्फ मुसलमान के होता है? और हिन्दू, हिन्दू है बुजदिल, खास तौर से ब्राह्मण, ठाकुर, बनिया बेचारा क्या करे—इस

कोठे का धान उस कोठ करे, उसे फुसत नहीं, उसके लिए य सब समझ से बाहर की बातें हैं, क्योंकि रुपये पैसे की नहीं। आखिर क्या करूँ? आदमी हू आदमियों मे ही रहना चाहता हूँ।'

मैंन कहा, "आपकी गगा जिस तरह पवित्र करती हुई बह रही हैं, लागो की समझ म वह तरह नही आती, इसलिए कि वे जडवादी हैं। वे जड गगा का महत्त्व मानत हैं। अछूत ही इसमे ठीक ठीक पवित्र हाग। पर कुछ दान लिया कीजिए। नहीं तो गुजर कैसे हागी?"

कुल्ली हँस। बोले, "बहुत गरीब ह फिर मैं पहले जमीदार था, लोग अब भी नम्बरदार कहकर पुकारत हैं, आप जानते ही हैं, उनसे कुछ ले नही सकता। सिफ बत्ती का तल लेता हूँ। रात को ही लडको की पढाई अच्छी हाती है क्योंकि बडे लडके रात को ही अपने काम-काज से फुसत पाकर आते हैं।'

मैंन कहा, "भाभी साहबा को सुना, आपन पूर्ण रूप से शुद्ध किया है।'

"हाँ," कुल्ली न मुस्किराकर कहा, "अयोध्याजी ले गया था। वहाँ गुरुमन्त्र दिलाया। लेकिन हिन्दू बडे नालायक ह। इस हद तक मुझे उम्मीद न थी। कहत हैं बिल्ली को तुलसी की माला पहनाकर लाया है। कहकर कुल्ली खुद हँस।

फिर कहा, 'यहाँ महन्त गिरि क मठ से कुछ रुपये माहवार मिलने की उम्मीद है। कुवर साहब, समरी, चेयरमैन हैं यहाँ के ट्रस्ट के, मैंने उनसे निवेदन किया था, उन्हाने देने का वचन दिया है। लेकिन यहाँ के जो लोग ह, व विरोधी हैं।

मैंन कहा 'यहाँ कौन-कौन हैं आप कहिए मैं मिलकर उनसे कहूँ।"

उदास होकर कुल्ली न कहा 'वे लाग न करेंगे।"

मैंन नाम पूछा। कुल्ली न नाम बतलाय।

मैंन कहा, अच्छा, नम्बरदार य लाग आपस नाराज क्या हैं?'

कुल्ली न कहा, "सच बात कह दू जब मैं मन्त्र लेकर आया, तब एक न बडे भले आदमी की तरह मुझसे आकर पूछा, 'कहो, नम्बरदार, कहाँ स मन्त्र लिवाया?' मैंने बतलाया। यहाँ स एक आदमी

अयोध्याजी गया, और वहा जाकर पूछा कि राय पथवारीदीन की स्त्री को मन्त्र दिया गया है, तो क्या यह मालूम कर लिया गया है कि वह किस जाति की है ? गुरुजी के चेल ने पूछकर कहा कि राय पथवारीदीन की स्त्री है, बस। उस आदमी न कहा, आपको धोखा दिया गया है, वह मुसलमानिन है। गुरुजी के मठ मे खलबली मच गयी। उनके चेल बिगड जायेंगे, तो आमदनी का क्या नतीजा हागा, और फिर अयोध्याजी है, जहा रामजी की जन्मभूमि पर बाबर की बनायी मसजिद है,—हिन्दू मुसलमानवाला भाव सदा जाग्रत रहता है, सोचकर, समझकर चेले न कहा—'आप जाइए हम उम छल करन की शिक्षा देंग। वह आदमी चला आया। मेरे पास चिटठी आयी तुमन हमसे छल किया इसलिए कण्ठी माला मन्त्र वापस कर दो, नही तो हम उलटी कण्ठी बाधकर, उलटे मन्त्र से उलटी माला जपकर अपना दिया मन्त्र वापस ले लेंगे।"

कौतूहलवधक बात थी। मैंने पूछा, "तब तो तुम्ह कोई अधिकार नही।"

कुल्ली बाले "जब तक दम नहीं निकलता। जब तक है, तब तक सबके जो अधिकार हैं, मुझे भी हैं, हालांकि यन्त्र-मन्त्र पर मुझे या भी विश्वास नही। लेकिन जिन्ह है, उन पर है। लिहाजा यह सब करना पडा।"

"फिर तुमने भी कोई जवाब दिया?" मैंने पूछा।

"हाँ, कसकर। गुरुजी की बोलती बन्द हो गयी। मैंने लिखा, जब आप शुद्ध की हुई मुसलमानिन को नही ग्रहण कर सकत, तब आप गुरु नही, ढोगी है आपने व्यापार खोल रक्खा है, आपम हृदय का बल नही, आप एक नही सौ उलटी माला जपिए। हिन्दुओ ने बराबर समाज को धाखा दिया है। लेकिन यह कबीर की बहन है। इसे काई धोखा नही द सकता। इसमे श्रद्धा है। श्रद्धा न होती, तो मेरे पास न आती। कबीर का भी रामानन्द ने ऐसी ही बात कही थी। लेकिन कबीर समझदार था। इसीलिए आप जैस सैकडो गुरु उनके चेले हुए। हिन्दुओ को चराया मुसलमाना को भी, और था महामूर्ख।' कुल्ली ओज म आ गय थ। कहकर हाफन लगे।

मैंने सोचा, कुछ सुस्ता लें। कुछ देर बाद मैंने पूछा, "आपने महात्माजी को लिखा ?"

कुल्ली ने कहा 'जान पडता है, वह भी ऐसे ही होंगे।"

मैंने कहा, "नहीं, साल भर अछूतोद्धार करने का उन्होंने काम ग्रहण किया है। देश के इस कोने से उस कोने तक दौरा करेंगे।'

कुल्ली ने कहा, 'बस, दौरा ही दौरा है। काम क्या होता है ? पहले अछूतों की बात नहीं सोची ? जब सरकार ने पेंच लगाया, तब खोलने के लिए दौडे-दौडे फिर रहे हैं।

मैंने कहा, अच्छा, यह बताओ दोस्त, तुमने भी पेंच में पडकर अछूतोद्धार सोचा है या नहीं ?'

कुल्ली नाराज हो गये। कहा "मेरे साथ भी कोई जमात है ? और अगर यही है तो बैठा लें महात्माजी मुसलमानिन।

"तुम कैसे हो ? मैंने डाँटा, 'वह बुड्ढे हो गये हैं, अब मुसलमानिन बैठायेंगे।"

कुल्ली शान्त हो गये। कहा, एक बात कही।' फिर शायद खत लिखने की सोचने लगे। सोचकर कहा, 'कोई चारा नहीं देख पडता। हाथ भी बँधे हैं। लेकिन काम करना ही है। क्या किया जाय ?'

मैंने कहा "नम्बरदार, महाजनो येन गतः स पन्था' इसीलिए कहा है। जिधर चलना चाहते हो आप, उधर चले हुए बहुत आदमी नजर आयेंगे आपको—आपसे बडे-बडे उसी तरफ चले जाइए। आज तक ऐसा ही हुआ है। कोई कुछ काम करता है तो दुनिया से ही वस्तु विषय ग्रहण करता है, और उस विषय के काम करनेवाले को देखता है पढता है, सीखता है, समझता है, तब अपनी तरह से एक चीज देता है। आप अछूतोद्धार कर रहे हैं, कीजिए, करनेवालो से मिलिए, उनकी माना लीजिए, जिन्हे अधिकांश जन मानते हैं मेरे आपके न मानने से उनकी मान-हानि नहीं होती, यही समझिए मैं आप उनके मुकाबले कितने क्षुद्र हैं। अगर यह धोखा है, तो इस धोखे को आप तो नहीं मिटा सकते ? आप अपना रास्ता भी नहीं निकाल सकते, क्योकि अभी आपने ही कहा —चारा नहीं हाथ भी बधे हैं। महात्माजी को ससार की बडी-बडी

विभूतियाँ मानती हैं। वह मामूली आदमी नहीं।"

कुल्ली कुछ दर स्तब्ध रह। फिर साँस भरकर बोले, "यहाँ कांग्रेस भी नहीं है। इतनी बडी बस्ती, देश के नाम मे हँसती है, यहाँ कांग्रेस का भी काम होना चाहिए।'

कुल्ली की आग जल उठी। सच्चा मनुष्य निकल आया, जिसम बडा मनुष्य नही होता। प्रसिद्धि मनुष्य नही। यही मनुष्य बडे-बडे प्रसिद्ध मनुष्य को भी नही मानता, सवशक्तिमान् ईश्वर की भी मुखालिफत के लिए सिर उठाता है, उठाया है। इसी ने अपने हिसाब से सबकी अच्छाई और बुराई को ताला है, और ससार मे उसका प्रचार किया है। ससार मे कब उतरा ?

मैं कुल्ली को देख रहा था। एक सास छोडकर कुल्ली ने कहा, 'मधुआ चमार की औरत को कल तेज़ बुखार था, देखने जाना है, अस्पताल अगर न ले जा सका तो डॉक्टर साहब के पैरा पड़ूगा—देख लें, फ़ीस के रुपये उसके पास कहा, मधुआ काम पर गया होगा, उसका लडका ढोर चराने।' कहकर, नमस्कार कर कुल्ली उठे। मैं देखता रहा, तज कदम वह चले गये।

मैं उठकर महेश गिरि मठ के मेम्बरो से मिलने गया। मेम्बर व ही होते हैं जो प्रतिष्ठित है, जो प्रतिष्ठित हैं, उन्ह अप्रतिष्ठा की बातें सब समय घेरे रहती है। पहले लालाजी मिले। बडे सज्जन है। दर्जी की दूकान पर खडे थे। कोई कोट सिलने को दिया था। कपडे के शौकीन हैं। घर के साधारण जमीदार। मेर घनिष्ठ मित्र। दर्जी कई बार उनके मुह पर कह चुका है कि रायबरेली छोडकर दलमऊ मे वह इसलिए है कि लाला साहब न उसे पहचाना है, और उसने लाला साहब को, अगर मन का काम न मिला, तो कारीगर का जी नही भरता, लाला साहब एक-एक अग नपात है, और देखते है ठीक बैठा या नही।

मुझे देखकर प्राचीन पद्धति के अनुसार लाला साहब ने प्रणाम किया, दर्जी ने भी हाथ जोडे। आशीर्वाद मैं देता नही, नमस्कार करता हू या खीस निपोरता हू। एक दिन मेरे पुत्र न लडकपन मे पूछा था, 'बप्पा, काई पैर लगता है तो आप आसीस क्यो नही दते ?' मैंने कहा

"मामा के यहा रहते रहते तुम्हारी जैसी आदत हो गयी, मेरी वैसी न हो पायी।"

मित्र ने डाट के साथ पूछा, 'क्या है ?"

मैंने कहा सुना, तुम महेश गिरि-मठ के मेम्बर हो। तुम्हे लोग मानते भी बहुत है। मेरे मित्र हो, इसलिए समझदार हो, मैं भी मानता हूँ। एकान्त की एक बात है।'

मित्र गदन बढाकर एकान्त की ओर चले। दर्जी समालोचक की दृष्टि से देखने लगा।

एकान्त म मैंने पूरे कविकण्ठ स गद्य म कहा, "यार, कुछ अच्छे के लिए भी करो।

"अहह —मित्र ने ध्वनि की "मैं समझ गया, कुल्ली ने पकड़ा होगा आपको। अरे, आप भले आदमी, इन बातो में न पडिए। आप तो जैसा सुना वैसा ही समझा।'

'नही," मैंने कहा, 'मैं व्यग्य बहुत लिख चुका हू, जस का वर ही नहीं समझता।'

"व्यग्य क्या ?" मित्र ने पूछा।

मैंने कहा, "जैसे तुम्हारा सर है। सर होकर न हो, या इस पर चार सीगें हो।"

"यानी ?" मित्र कुछ बिगडे।

'अब यानी और क्या ?' मैंने सीधे देखते हुए कहा।

'आप सही सही बात कहिए।" मित्र कुछ दोरखे होकर बोले।

'अब आय सोचकर व्यग्य मे मैंने कहा, "रास्ते पर, कल आठ-दस आदमी तुम्हारा नाम लेकर कह रहे थे, लाला की एक टाग तोड दी जाय, जब देखो, दर्जी की दूकान पर खडे रहते है।'

'एँ!' लाला घबराये। पूछा, 'कोई वजह भी मालूम हुई ?"

'कुछ नही," मैंने कहा, "काले काले आदमी थे। यही पासी चमार होंगे।"

लाला सोचकर निश्चय पर पहुचने लगे। कहा, हा मैं समझ गया।'

"कुल्ली मिले थे ?" लाला ने पूछा।

"वह तो बहुत दिन मे नही मिले। वे लोग क्या बिगडे है, मुझे अदाज लडानी पडी।'

सोचत हुए लाला दर्जी की ओर बढे। मैं पण्डितजी की ओर चला। दिन के ग्यारह का समय होगा। पण्डितजी के यहाँ पहुचा, तो देखा, पण्डितजी कनकया उडा रह है, मभा लखनऊ से मगवाया है इसलिए कि उनकी कनकैया कोई काट न पाय।

मैंन कहा "एक जरूरी काम मे आया था।'

बोले, "देख ही रह है अभी फुसत नही है।"

मैं समझ गया यह और कडा मुकाम है। कहा "रायबरेली से डिप्टी साहब आय हैं। गगा नहाने आये थे। मैं यहाँ हू, जानत थे। क्योकि उनमे मिलकर आया था और उन्ह बुला भी आया।"

पण्डितजी को जैस जूडी आ गयी। पूछा, 'कहा हैं ?"

मैंने कहा "मरे यहाँ ही हैं आपका बुलाया है। साथ ही आते थे। मैंने कहा— नहा चुके हो, गरमा जाओगे, फिर पैदल चलना है, और चढाई भी है मैं जाता हूँ वह भी मेरे मित्र हैं बुला लाता हू।' "

पण्डितजी ने नौकर को बुलाकर कहा, 'अरे डोर लपेट। हम डिप्टी साहब न बुलाया है।

नौकर न पतग ले ली। आप तुत फुत नीचे उतरे, कपडे पहनने लगे। तैयार होकर छडी लेकर चले। बडी जल्दी जल्दी पैर उठ रह थे। मैं उनकी चाल देखता, साथ चलता जा रहा था। आधे रास्त पर आकर पूछा, 'अपने हल्के के महादेवप्रसादजी हैं ?'

मैंने कहा, 'हा।'

न जाने क्या सोचते रह। घर आकर मैंने बैठका खोला। बैठका खोलत ही उन्होन पूछा, 'डिप्टी साहब ?"

मैंन कहा, "अपनी ऐमी की तैसी मे चले गये।'

"आपने मुझे धोखा दिया।" पण्डितजी ने कहा।

'आपने मुझे कौन नान दिया था ?" मैंन कहा।

'बस, अब क्या कहूँ आपको !" पण्डितजी गरमाये हुए लौटे।

मैं तभी समझ गया था, इस मूर्ख की बुद्धि का कोठा बिलकुल खाली है। कहा "जैसा मेरा आना-जाना व्यर्थ रहा, वैसा ही आपका, दुःख न कीजिएगा। जाइए, कनकया उडाइए।"

चौदह

मैं लखनऊ आकर कुछ दिनों बाद लौटा। कुल्ली ने अपने काम के सम्बन्ध में क्या किया, क्या कर रहे हैं जानने की इच्छा थी, आग्रह था। जाने पर ससुराल में ही कुल्ली की तारीफ सुनी। श्रीमतीजी की जगह सलहज साहब थी, अब तक दो-तीन बच्चे की मा हो चुकी थी, इसलिए इच्छा होने पर बात चीत छेड देता था, घूघट के भीतर से शृगार साहित्य के उत्तर बड़े भले मालूम पडते थे।

एक दिन कहा भी कि महात्माजी पर्दे के खिलाफ प्रचार कर रहे हैं, तुम उनकी भक्त भी हो, फिर मेरे सामने क्या घूघट काढती हो? उन्होने कहा, "यो मेरी इच्छा नही, लेकिन यहा के आदमी ऐसे हैं कि कुछ का-कुछ सोच लेते है।' मैंने कहा, 'तो अपनी आखें ढककर दूसरो की आखो पर पर्दा डालना चाहती हो! रहस्यवाद अच्छा है।' ऐसी मेरी छोटी सलहज साहबा और सासुजी मेरे जाते ही उच्छ्वसित होकर भिन्न भिन्न वाक्यो से एक ही बात कर गयी 'कुल्ली बडा अच्छा आदमी है, खूब काम कर रहा है, यहा एक दूसरे को देखकर जलते थे, अब सब एक दूसरे की भलाई की ओर बढने लगे है, कितने स्वयसेवक इस बस्ती मे हो गये है। कांग्रेस कायम हो गयी है। सब अकेले कुल्ली का किया हुआ है।"

सासुजी के सुपुत्र ने गले मे और जोर देकर कहा, "अम्मा, कुल्ली अठारह घण्टा काम करते है। छ छ कोस पैदल जाते हैं कांग्रेस के नियम्बर (मेम्बर) बनाने के लिए। बस्ती मे और बाहर सब जगह इतनी इज्जत है कि लोग देखकर खडे हो जाते हैं।"

सासुजी ने कहा, 'भैया, आदमी नही, देवता है कुल्ली।"

सलहज माहबा ने कहा, 'मैं तो उन्हे अवतार मानती हू। बिन्दा खटिक की दुलहिन मर रही थी, गाँव मे इतने आदमी थे, कोई नहीं खडा हुआ, नम्बरदार न अपने हाथो उसकी सेवा की।'

मैंने कहा, "जरा उनस मिलना था।" मन मे ऊधम मचा हुआ था कि महात्माजी को कुल्ली ने लिखा होगा, देखू, क्या जवाब आया।

साले साहब ने कहा 'मैं चला जाऊँगा।' कहकर बडी तेजी स अपना डण्डा उठाकर, एक दफा अपनी बीवी को, फिर मुझे, फिर विश्वास की दृष्टि से अपनी अम्मा देखकर चले।

मैंने बाहर के बैठके का रास्ता लिया। इस समय कुछ प्रसिद्ध हो जान के कारण, बस्ती के स्कूल-कॉलेज के पढनेवाले लडके भी आते थे, उन्हे भी समय देना पडता था। प्राय सबका पहला प्रश्न 'छायावाद क्या है' रहा। मैं उत्तर देता देता अभ्यस्त हो गया था। समझाने मे देर न होती थी, यद्यपि लडको की समझ मे कुछ न आता था। बाद को आश्वासन देता था कि बाद को समझिएगा।

इन्ही दिनो श्रीमान् बाबू इकबाल वर्मा साहब 'सेहर' से वहाँ मुलाकात हुई। अपनी सज्जनता और शुद्ध साहित्यिकता के कारण वह स्वय पहले मुझसे मिलने आये थे—यह मालूम कर कि मैं वहा हूँ। मुझे यह जानकर बडी खुशी हुई कि 'सेहर' साहब की और मेरी एक ही बस्ती मे ससुराल है। उनके साथ गोस्वामी तुलसीदासजी के सुप्रसिद्ध समालोचक विद्वान बाबू राजबहादुर लमगोडा एम०ए० एल० एल्०बी० साहब के भाई साहब भी थे। लमगोडा साहब से मिलन की मेरी बहुत दिनो की इच्छा थी। क्योकि उनकी आलोचना मुझे बहुत पसन्द आयी थी, पर दुर्भाग्यवश मिल नही सका था, उनके भाई साहब से मैंने जिक्र किया, उन्होने के मकान मे, उन्होने मुझे फतहपुर बुलाया, फिर सेहर' साहब न कविता सुनाने की आज्ञा की, मैंने सुनायी। ऐसी अनेक घटनाएं हुइ, पर अप्रसिद्ध जनो की होन के कारण रहन दी गयी। सब जगह एक बात मैंने देखी, मेरी कविता पढकर लोग नही समझे, सुनकर समझे, और इतना समझे कि मुझे 'श्रुति' पर ही कविता को छोडना पडा।

वठके मे बठा नय भाव रूपमयी की तलाश म था कि साल साहब आये, और बडी इज्जत से कुल्ली को दिखाकर—'वह हैं—भीतर चले गये। उठकर मैंने कुल्ली का स्वागत किया। वह बैठे। देखा चेहरा एक दिव्य आभा से पूर्ण है लेकिन देह पहले से दुबली, जैसे कुल्ली समझ गये हैं, जीवन की सन्ध्या हो गयी है, अब घर लौटना है। कविता का दिव्य रूप और भाव सामन जड शरीर म देखकर पुलकित हो उठा।

कुल्ली स्थिर भाव से बठे रह। इतनी शांति कुल्ली म मैंन नहीं दखी थी, जस ससार को ससार का रास्ता बताकर अपन रास्त की अडचनें दूर कर रह हा। मैं कुछ देर और चुपचाप बैठा रहा।

कुल्ली ने एक सास छोडी जस वह रह हो, ससार म सास लेने का भी सुबीता नहीं, यहा बडी निष्ठुरता है, यहा निश्छल प्राणों पर ही लोग प्रहार करत हैं, केवल स्वार्थ है यहाँ वह चाह जन-सेवा हो, चाहे देश सेवा इस सवा से लोग अपनी सेवा करना चाहत हैं, किसान इसलिए काग्रेस मे आत हैं कि जमींदार की मारो स, सरकार के अन्याय से बचें, और जमीन उनकी हो जाय, गरीब इसलिए तारीफ करते हैं कि उन्हे कुछ मिलता है। पर इतना ही क्या सबकुछ है? क्या इसस जीवन को शान्ति मिलती है? शायद सास के रहते नही।'

इतना स्तब्ध भाव था कि बात करने की हिम्मत नहीं होती थी। इसी समय साले साहब भीतर से जल-पान ले आये, और कुल्ली के सामने आदरपूर्वक रखते हुए बोले, "रात भर दुखिया चमार की सेवा करत है, उसकी स्त्री का देहान्त हो गया है, दुखिया बीमार है। आज लालगज जायगे वहाँ काग्रेस का काम है। कल दुपहर को जल-पान किया था तब से ऐसे ही है।'

चुपचाप तश्तरी उठाकर कुल्ली नाश्ता करने लगे। चेहरा मुख। मनुष्यत्व रह रहकर विकास पा रहा है। देखकर मैंने सिर झुका दिया।

कुल्ली नाश्ता करके हाथ मुह धोकर बैठे, पान खाया। एक तृप्ति की साँस ली। उन्ह कुछ देर तक एकटक देखकर मेरे साले साहब ने प्रस्थान किया।

बडी हिम्मत करके मैंन पूछा, नम्बरदार फिर महात्माजी को लिखा

था ?"

कुल्ली मुस्किराय। कहा, "अब क्या कहू ?'

मरे लिए इतना बहुत था। एक दफा बैठके के इस तरफ से उस तरफ तक टहल आया। नाटक के पाट काफी कर चुका था। प्रभावित होकर कहा, "बडा गुस्सा लगता है। कितना बडा नेता क्यो न हो, आदमी की पहचान नही कर पाता। करें भी कहा से ? दस पाच जगह कार्यकर्ताओ ने धोखा दिया कि समझ बैठे सब धोखेबाज हैं।" कहकर कुल्ली को देखा, प्रभाव पड रहा था। कहा, "मैं तो इसीलिए राजनीति म भाग नही लेता। मैं जानता हूँ मुझे प्राविन्शल काग्रेस कमेटी का भी प्रेसीडेंट न बनायेंगे, और कहन से भी बाज न आयेंगे कि सिपाही का धम सरदार बनना नही है। लेकिन सरदार सरदार ही रहेगे—सैंकडो पेंच कसते हुए, ऊपर न चढने देंगे।' कुल्ली जगे। ध्वनि म प्रतिध्वनि होती ही है। कहकर मैं बैठ गया। पूछा, "क्या जवाब दिया महात्माजी ने ?'

'कुछ नही," कुल्ली ने शुरू किया, 'मैंने सत्रह चिटिठया (सत्रह या सत्ताइस कहा, याद नही) महात्माजी को लिखी, लेकिन उनका मौन भग न हुआ। किसी एक चिटठी का जवाब महादेव देसाई न दिया था। बस, एक सतर—इलाहाबाद मे प्रधान आफिस है प्रान्तीय, लिखिए।'

"आपने फटकारा नही ?" मैंने उग्र सहानुभूति स कहा।

कुल्ली खासकर बाले, 'आप क्या समझते है ? मैंने लिखा—महात्माजी आप मुझस हजार गुना ज्यादा पढे हो सकत है। तमाम दुनिया म आपका डका पिटता है लेकिन हरएक की परिस्थिति को आप हरगिज नही समझ सकते। अगर समझत, तो मौन न रहते। जब मौन हैं, तब आप भगवान हरगिज नही हो सकते। भगवान अन्तर्यामी होत हैं, आप अन्तर्यामी नही है। यह मुझे पूरा पूरा विश्वास हो गया है। आपको बनियो ने भगवान बनाया है, क्योकि ब्राह्मणो और ठाकुरा मे भगवान् हुए हैं, बनियो मे नही। जिस तरह बनियो ने आपको भगवान् बनाया है उसी तरह आप बनिया भगवान् ह।"

मैंन कहा, 'अरे, कुछ काम की बात भी लिखी ?'

"काम की बात तो सत्रह बार लिख चुका था।"

"तो यह अटठारहवाँ पत्र है, या अटठाईसवा ?"

"यह मुझे याद नही। आप आइएगा, तो आपको नक्ल दिखा-ऊँगा।'

मैंने कहा "बीच-बीच मे दोहा चौपाई शेर भी लिखे थे ? इसमे प्रभाव पडता है।"

"उस वक्त कुछ याद ही नही आया। जो समझ मे आया लिखा। यह तो जानता ही हू कि मूख हूँ, बडी बडाई मूख कह लेंगे। लेकिन भगवान तो मूख और पण्डित नही मानत, उनकी दष्टि मे सब बराबर है।'

'लेकिन गाधीजी ऐसे भगवान नही। वह तो सबको भगवान् बनाना चाहते हैं इसलिए लोग उन्हे अवतार कहते हैं।'

'झूठ है।' कुल्ली ने कहा।

मैंने पूछा 'अच्छा फिर आपने क्या किया ?'

'फिर इलाहाबाद को लिखा (अछूता के जिस ऑफिस का नाम कुल्ली ने लिया वह मुझे याद नही), लेकिन पहले वहा से भी जवाब न आया तब मैंने प० जवाहरलालजी को लिखा।'

'कैसे लिखा, यह कहिए।"

गम्भीर होकर कुल्ली बोले, 'पहले तो सीधे-सीधे लिखा जैसा सबको लिखा जाता है। बड आदमी है इसलिए कुछ इज्जत के साथ लिखा, लेकिन उसका उत्तर जब न आया—तब डाटकर लिखा। अरे, अपने राम को क्या, रानी रिसायँगी, अपना रनवास लेंगी।'

मै ताड गया, राजा इस समय कुल्ली खुद है, इसलिए राजा नही कहना चाहते। कहा, "इस साल जवाहरलालजी राष्ट्रपति है, राजा कहना चाहिए था।

'वह राजा रानी एक हैं।' कुल्ली ने कहा "दूसरे पत्र का जवाब तो उन्होंने नही दिया, लेकिन पत्र को अछूता के कार्यालय मे भिजवा दिया। वहा से जवाब आया कि मदद की जायगी। रायबरेली मे जिलावाली आफिस मे रुपये लीजिएगा, यहाँ से भेज दिये जायँगे।'

मैंने पूछा, 'फिर आपको रुपये मिले ?'

"हा, एक बार, बस।" कहकर कुल्ली ने बाहर की तरफ देखा। कहा, "बडा की बात बडे पहचानें। ज्यादा कहना उचित नही। अपने सिर दाव लेना सीख रहा हू। इतना है कि तबियत नही भरी, जिस तरह चार पैसे के भोजन से सीधे व्यवहार से भरती है। मुझे लालगज जाना है। वहा से उधर देहात घूमूगा। काग्रेस के मेम्बर बना रहा हू। फुसत कम रहती है। पाठशाला आपकी भाभी चलाती हैं। एक दिन जाइएगा। मैं कई रोज के लिए जा रहा हूँ। बहुत दुबल भी हू। भगवान के भरोस अब नाव छोड दी है। कोई खेनवाला नही देख पडा। अच्छा कुछ खयाल न कीजिएगा। नमस्कार।"

कुल्ली चले गये। अब यह वह कुल्ली नही है। प्राय पचपन छप्पन की उम्र। लेकिन कितनी तेजी! कोइ उपाय नही मिला, किसी ने हाथ नही पकडा, कुछ भी सहारा नही रहा, तब दूसरी दुनिया की तरफ मुह फेरा है। कितना सु दर है इस समय सबकुछ कुल्ली का! मैं देखता और सोचता रहा।

पन्द्रह

दो-तीन दिन रहकर कुल्ली की पाठशाला और पत्नी को दखकर मैं लखनऊ चला आया। लेकिन जी नही लगा। कोई शक्ति मुझे दलमऊ की तरफ खीच रही थी, वहा की श्यामल-सजल प्रकृति, निमल गगा, सु दर घाट, दिग त विस्तार रह रहकर याद आने लगा। सबस अधिक आकषण कुल्ली का। एक जैसे पारलौकिक स्नेह मौन आम त्रण द रहा था—तुम आओ, तुम आओ। इसी समय याद आया, बहुत दिना स दलमऊ की गगा की नही नहायी। इस बार चलकर नहायें।

इस तरह तीन-ही चार महीने के अ दर फिर दलमऊ गया। गगा तट की शारद प्रकृति बडी सुहावनी मालूम दी। सघन वृक्षावली म एक पुरानी स्मृति जैस लिपटी हो। प्रकृति जैस वर्षा से नहाकर निखर गयी है। चारो ओर उज्ज्वलता। कुल्ली के लिए एसा ही उज्ज्वल समय आ गया

है सोचकर मन हर्ष से भर गया। मैं इक्के पर चला जा रहा था, पहले दिन की याद आयी, जब कुल्ली मिले थे। वह अदालती फशन का बिगडा कुल्ली आदर्श आदमी बन गया है।

इक्का ससुराल के सामने रास्ते पर रुका। आदमी आया। सामान उतार ले गया। सासुजी फाटक के सामने खडी हुईं। इक्केवाले का पैसा दिला दिया। उतरकर मैंने उनके चरण छुये। भीतर गया। सलहज साहबा सिदरे के सामने आकर खडी हुइ। यह स्वागत था—कलश उनके प्राकृतिक थे साक्षात् प्रकृति को मन मे नमस्कार किया। त्रुटियां बहुत होती ह लेकिन इनकी कृपा के बिना पर्दा पार करना दु साध्य है, बहुत पहले से जानता था। भविष्य की भगवान जान। साले साहब भीतर थे। बाहर निकले। कहा, जीजा, कुल्ली सख्त बीमार हैं आप बडे मौके से आये। मुलाकात हो जायगी। डॉक्टर साहब कहते थे, अब नही बचेंगे—कम स कम हमारे मान की बात नही रही, क्योंकि यहा वैसे अस्त्र नही हैं, न वैसी दवा है, रायबरेली ले जायें वहा बचना हुआ बच जायेंगे। कल जाइए, देख आइए।

मैंने पूछा, 'हुआ क्या है ?'

उन्होंने मुह बिगाडकर कहा, गर्मी। पहल थी, इधर दौडे बहुत क्वार की धूप सिर स उतरी, फाके किये, बीमार हो गये। लेकिन जीजा, यहाँ कोई गाव नहा, जहा कुल्ली न कागरेस के नियम्बर (मिम्बर) नही बनाये। नीचे का पेट तक सड गया है—सेरो पस निकलता है, इतनी बदबू आती है कि कोई छन भर नही ठहर सकता। और '

मैंने कहा, "और क्या ?"

साले साहब मुस्किराकर रह गये।

मैंने कहा "हँसन की कौन सी बात है ?"

अपनी अम्मा और पत्नी की तरफ देखकर साले साहब ने मुझे एकान्त मे चलकर बुलाया, और मेरे जाने पर कान के पास मुह ले जाकर कहा, 'लिंग लापता है।'

'लापता ?" मैंने सन्देह के प्रकाश्य स्वर म पूछा।

हाँ।" उन्होंने कहा, 'लोग कहते हैं अब नहीं रहा। कहते हैं—अब अगर कुल्ली जी भी गये, तो कुल्लियायन क्या करेंगी ?' मैं गम्भीर

होकर चारपाइ पर आकर बैठा ।

सलहज साहबा गम्भीर होकर बाली, "हा, कुल्ली की बहुत खराब हालत है ।"

सासुजी मेरे जल-पान की व्यवस्था के लिए भीतर चली गयी थी । अपनी बहू की बात सुनकर उसे भीतर बुलाया । मैं दम साधे बैठा रहा । जल पान के बाद घर की और और बातें होती रहीं ।

दूसरे दिन सबेरे धूप निकलने पर मैं कुल्ली के यहा गया । रास्ते मे कई स्वयसेवक उधर जाते हुए मिले, दरवाजे पर कई अछूत लडके, उनके तीन चार अभिभावक । सबके चहरे कह रह थे, कुल्ली नही बचेंगे । मैं भीतर गया ।

ठीक उसी जगह, जहा पहले दिन कुल्ली बठे थे, आज पडे दीखे । आज व भाव यथास्थान अपनी कुरुपता का प्राप्त है, लेकिन मुख पर नही । मुख पर दिव्य कान्ति क्रीडा कर रही ह । प्रवेश करत ही ऐसी बदबू आयी कि जान पडा, एक क्षण नही ठहर सकूगा । हिम्मत करके खडा रहा । विद्या और अविद्या का आधा आधा भाग कुल्ली की देह म पूर्ण रूप स प्रकाशित था । कुल्ली कुछ ध्यान मे थे । आखें खोलकर देखा —सामने देखकर, "आह ! आप ह ? बडे सौभाग्य, बडे सौभाग्य, अब मैं कुछ नही चाहता ।" कहकर विह्वल हो गये । एक अछूत से सिरहाने की तरफ बिस्तरा बिछा देने के लिए कहा, मुझसे कहा, 'यह हाल है । बडी बदबू मिलती हागी । लेकिन इधर न मिलेगी । दिल के ऊपर मैं नही चढने द रहा । मुझे इसका रूप देख पडता है । हृदय स ऊपर मैं बहुत अच्छा हू । सिरहाने बैठकर बताइए बदबू मिलती है ?"

बैठकर मैंने मालूम किया, वास्तव मे उधर बदबू नही थी । क्या कहूँ, क्या करू, कुछ समझ म नही आ रहा था । पाच रुपये निकाले, और कुल्ली की स्त्री को देते हुए कहा "आप दूध पीजिएगा ।"

कुल्ली कुछ न बोले । केवल ऊपर की तरफ देखा । कुछ देर फिर मौन रहा ।

मैंने पूछा, "डॉक्टर साहब क्या कहते हैं ?'

"डॉक्टर क्या कहेंगे? अब कहने की बात नहीं रही। ईश्वर की इच्छा।" कुल्ली ने आँखें मूंद लीं।

कुछ देर तक मैं बैठा रहा। फिर बाहर निकला। कुल्ली की स्त्री रोने लगी। कहा, "रायबरेली ले जाने के लिए कहते हैं। खर्चा यही पाँच रुपया है। डोली में आयेंगे नहीं। लारी कोई आयगी, यहाँ खाली होगी तो उसमें ले जाऊँगी, लेकिन फिर वहाँ क्या होगा? वहाँ भी खर्चा है।" कहकर रोने लगी।

मैंने कहा, "आप इन्हें ले जाइए। मैं कुछ रुपये चन्दा करके रायबरेली आता हूँ। आगे ईश्वर मालिक है।"

आश्वस्त होकर कुल्ली की स्त्री देखती रही, मैं धीरे-धीरे बाहर चला।

घर में दूसरे दिन मालूम किया, कुल्ली की स्त्री एक लारी पर कुल्ली को लेकर रायबरेली गयी हैं। उत्तरदायित्व बढ़ गया। दलमऊ के स्वयंसेवकों को लेकर कांग्रेस कमेटी के दफ्तर गया। वहाँ प्रेसीडेंट साहब अपना पक्का मकान बनवा रहे थे। उन्हीं के अधबने मकान के एक कमरे में कांग्रेस कमेटी का दफ्तर है। स्वयंसेवकों ने मेरा परिचय दिया। कुल्ली का काम वह देख चुके थे। रुपये की बात मैंने कही, तो बोले "कांग्रेस का यह नियम नहीं, वह आपसे रुपये ले तो सकती है पर दे नहीं सकती।"

"यह मैं जानता हूँ पर जिसे योग्य समझती है उसे इतना देती है कि दूसरों को पता नहीं चलता।"

बोले "आपका मतलब?"

मैंने कहा "यह तो पहले अर्ज कर चुका।"

एक प्रेसीडेंट की हैसियत से बोले, "रुपये नहीं दिये जायेंगे।"

मैंने कहा, "पहले मैं पाँच रुपये दे चुका हूँ, अब और दो रुपये दे रहा हूँ। रायबरेली का खर्च बरदाश्त करूँगा। इससे अधिक इस समय मेरी शक्ति नहीं। तीन रुपये और तीन सज्जन मित्रों से एक एक रुपया चन्दा करके लिया है। कुछ आप दे दें, तो काम चल जायगा।

उन्होंने कहा "सात रुपये विजयलक्ष्मी के स्वागत के मंच से बचे

हैं, आठ हो चुके है, हालाकि वह आयी नही, लेकिन वे रुपये जमा कर दिये गये है।"

मैंने कहा, "विजयलक्ष्मीजी के स्वागत से कुल्ली नम्बरदार की जान ज्यादा कीमती है, यह तो आप मानते है ?"

उन्होंने कहा, "मैं सबकुछ जानता हू। लेकिन यही शहरवाले जब घर बन गया, तब कहते है, दो हाय म्युनिसिपैलिटी की जगह बढा ली है।"

'इसीलिए आप विजयलक्ष्मीजी का ध्यान कर रहे हैं ?' मैंने मन म कहा। खुलकर कहा 'कोई विजयलक्ष्मीजी का स्वागत करता है, तो पहले पता लगाती है—क्यो स्वागत किया गया। अगर कारण कोई उन्हे पाएदार मालूम हुआ, तो उसके पाए उखाडकर तब दम लेती है। मैं तो लखनऊ मे रहता हूँ, रोज़ देखता-सुनता हूँ। साक्षात विजयलक्ष्मी हैं।" हाथ जोडकर मैंने प्रणाम किया, "कभी किसी से नहीं मिलती, इसीलिए, देश मे क्या, ससार मे उनकी जोड नही। लेकिन उन्हे मालूम हो जाय कि किसी ने काग्रेस के किसी कायकता के पीछे एक रकम फूक दी है, तो फिर उनस जो चाह, करवा ले।"

लाला मुह फैलाये सुनते रहे। पूछा, "आपसे मिलती है ?"

मैंने कहा, "नही, किसी से नही। लेकिन काम की बात होती है, तो इनकार भी नही करती।" मैंने फिर नमस्कार किया, "साक्षात देवी!"

लाला ने कहा, "तो वे सात रुपये हैं, ले जाइए।"

"हाँ," मैंने कहा, "दीजिए, बडी देर हो गयी।"

लालाजी स रुपये लेकर मैंने रायबरेली जाने की तयारी की। कुल्ली के एक मुसलमान मित्र भी स्टेशन पर मिले, वहीं जा रहे थे। रायबरेली पहुचने पर सिविलसजन से मालूम हुआ, पहले मे दशा सुधार पर है, क्याकि पहले चिल्लाते थे, अब चुप रहते हैं। कुल्ली को देखन पर उल्टा फल मालूम दिया—शक्ति बिलकुल क्षीण हो गयी है। आॅपरेशन के बाद से चित्त ऊबता जा रहा है। कुल्ली ने यहा भी कहा, "डॉक्टरा को कुछ नही आता। मैं कहता हू, ड्रेसिंग न दीजिए, मैं चन्द

घण्टा का मेहमान हू, लेकिन कहते हैं, नही, यह दिल की घबराहट है, तुम अच्छे हो जाओगे।'

मै देखता था, कुल्ली की वाणी मे, मुख पर, दृष्टि मे कोई दाग नही, उसकी कोई उपमा भी नही दी जा सकती।

इसी समय सर्जन साहब भी देखने आये। कुल्ली ने कहा, "बाबूजी, मैं बचूगा नही लोगो को अब मेरे ही पास रहने दीजिए, उन्ह फल और दवा के लिए दौडाएँ नहीं।

डाक्टर साहब ने कहा "अगर तुम्हे यह दिव्य ज्ञान था, तो यहाँ आना ही नहीं था, जब आये हो तब जैसा हम कहते हैं, करो। पहले तुम्हारा गला खाने पर घरघराता था अब बन्द हो गया है।"

कुल्ली ने कहा "बाबूजी मेरा गला नही घरघराता था, नाक बोलती थी अब कमजोर हो गया हू, नही बोलती।"

"चुप रहो," डॉक्टर साहब ने कहा, "नाक बजना और गला घरघराना एक बात नही। हम खुद देख सुन चुके हैं। बोलो मत।'

डाक्टर साहब दूसरे रोगी की तरफ चले गये। कुल्ली सीधी सरल दृष्टि से उन्ह देखते रहे।

दलमऊ म मैंने सुना था जब से कुल्ली की हालत और सगीन हुई, तब से उनकी स्त्री के यहा एक क्षण पर नहीं जमते। रायबरेली भर म भागी फिरती हैं।

मैंने बात साफ कर लेने के लिए पूछा, क्या दु:ख स ?

उत्तर बहुत शोभित नही मिला।

लेकिन जब मैं गया, दुर्भाग्यवश वह वहा नही थी। रुपये लिये खडा रहा। वह सुनी बात रह रहकर याद आती रही। अन्त म जब धैर्य जाता रहा तब मैंने कहा, 'आपकी श्रीमतीजी नहीं हैं, कुछ रुपये लाया हू।"

कुल्ली न साथ गये मुसलमान सज्जन की ओर इशारा करके कहा "इन्ह द दीजिए। वह बचारी तो इस उस काम स दिन भर मारी मारी फिरती है।'

मैंने रुपये द दिये। रहने के लिए कुल्ली न पूछा, 'यहाँ कहाँ

रहिएगा ?"

मैंने कहा, "कुछ मदद रायबरेली से भी पहुचाने का इन्तज़ाम करूँगा। मेरे एक मित्र यहाँ टेज़री अफसर है। उनके बँगले म ठहरूँगा। वहीं बातचीत करूँगा।"

नमस्कार कर मै विदा हुआ। कुल्ली ने कहा, "अब मुलाकात न होगी।' आखो स आँसू टपक पडे। मै वहा से बाहर निकल आया।

सोलह

टेज़री अफसर से कुल्ली की मदद के लिए कहकर मैं दलमऊ चला आया। दो ही तीन रोज़ मे मालूम हुआ कुल्ली का देहान्त हो गया है, उनकी लाश दलमऊ लायी जा रही है, दलमऊ के स्वयसेवक अछूत और काग्रेस कार्यकर्ता जुलूस निकालेंगे। फिर नाव पर शव लेकर गगाजी के उस पार अन्तर्वेद मे जलायेंगे। दाह के लिए कुल्ली वश के कोई दीपक बुलाये गये हैं, उनकी स्त्री चूकि विवाहिता नहीं, इसलिए उसके हाथ अन्तिम सस्कार न कराया जायगा। मैं स्तब्ध हो गया। कुल्ली का यह परिणाम देखकर, लेकिन साथ ही कस्बे-भर के मनुष्यों की उमड़ती हुई सहानुभूति स आश्चर्य भी हुआ। एक साधारण आदमी देखते देखते इतना असाधारण हो गया। दुख था, अब कुल्ली स मुलाकात न होगी। कुल्ली मुझे क्या समझने लगे थे, यह लिखकर कलम को कलकित न करूँगा। उनके जीवन पर किसकी गहरी छाप थी, यह मुझस अधिक कोई नहीं जानता। कुल्ली साधारण आदमी थे, हिन्दी के सुप्रसिद्ध व्यक्ति प्रेमचन्दजी और 'प्रसादजी' अन्तिम समय मे अपना एक-एक सत्य मुझे दे गये थे, वह मेरे ही पास रहेगा, इसलिए कि उसकी बाहर शोभा न होगी कदर्थ होगा, उनकी महान् आत्माएँ कुण्ठित होगी। ऐसा ही एक सत्य कुल्ली के पास भी था। मनुष्य अपने समझे हुए जीवन की समझ अन्त ही परिवर्तन मे समय पाता है, और देता है। कुल्ली कुछ पहले दे

चुके थे इन लोगा ने वाद को दी, इसलिए कि इनम स्पर्द्धा थी, इनसे स्पर्द्धा करनेवाला हिंदी मे न था।

दूसरे की मैं नही जानता, मुझ पर एक प्रकार का प्रभाव पडता है, जो दुख नही, नश की तरह का है जब किसी प्रियजन का वियोग होता है या वैसा भय मुझमे आता है। कुल्ली का देहात हो गया है, मैंने बठके म सुना था। कुल्ली की लाश दलमऊ पहुँची, उस समय मैं बैठके म था, स्वयसेवक दो बार बुलाकर तीसरी बार बुलाने आया। जब जुलूस निकल रहा था, मैं वही था न जा सकने की बात कही। कुल्ली को फूककर लोग वापस आय मैं वही बैठा था। घर के लाग देख दखकर लौट गये। शाम को प्रकृतिस्थ होकर भोजन किया। कुल्ली की स्त्री चिल्ला चिल्लाकर आसमान फाड रही है, सुना करता था, जा नही सका। दस दिन हो गय। कुल्ली का दसवा समाप्त हो गया। अवश्य मुझे यह मालूम न था कि कुल्ली का दसवा हो गया, एकादशाह है।

एकादशाह के दिन दस बजे के करीब कुल्ली की स्त्री को दखने गया। उस समय वहा एक घटना हो गयी थी, इसलिए कुल्ली की स्त्री मे कुल्ली की अपेक्षा मुसलमानिनवाला भाव प्रबल था।

मुझसे स्वर को खीचकर कहा, "नम्बरदार तो चले गय, उनका सब काम हो गया, लेकिन दस दिन तक जो लोग आय, रह, वे आज एकादशाह को क्या नही आयेंगे ? मैं आपसे पूछती हू, यह हिंदुआ का खरापन है या दोगलापन ?"

बात कुछ मरी समझ म नही आयी। मैंने कहा, "भाव जरा और साफ करक बताइए। मैं इतन स नही समझा।"

श्रीमती कुल्ली दोनो हाथ के पजे उठाकर उपदेश की मुद्रा स बोली, "देखिए आप ता आय नही, नम्बरदार को दाग दिया—उनके हैं काई, मैं नही जानती, अच्छा भाइ, दाग दिया तो दिया, दस रोज माना, ठीक है, दसवें दिन पण्डित और टोला पडोस, गाँवघर क सब आदमी थे। दाग दनवाल न मुझसे कहा, इतना तो हम कर देत हैं। लेकिन साल भर हम न मान सकेंगे, हम काम है फिर हमारे चाचा भी

बीमार हैं—अरे हा, कुछ हो जाय, तो उनके भी कोई नहीं, इसलिए सपिण्डी तुम ले लो। पण्डित ने भी कहा, ठीक है, ले लो। गाव के दस भलेमानसो ने भी कहा। मैंने कहा, अच्छी बात है, पण्डित जब कहते हैं, तब ले लें। सपिण्डी ले ली। अब आज होम है। पण्डित को बुलाया, तो कहते हैं, हम न जायेंगे।'

मैंने पूछा, "क्यो ?"

जो बुलाने गया था, वह एक अछूत लडका था। उसने कहा, "मन्नी पण्डित ने कहा है, एक तो यो ही हमारी बहन की शादी नही होती, क्योकि हम गगापुत्रो के यहा पण्डिताई करते हैं, कुल्ली की स्त्री के घर होम कराने जायेंगे, तो कोई पानी भी न पियेगा।

"सुन लिया आपने ?" कुल्ली की स्त्री ने कहा, "यहा मन्नी पण्डित कल कहते थे—सपिण्डी ले लो। अगर तुम्हे काम नही करना था, तो तुमने कहा क्या ? और जब कहा, तब आओगे कैसे नही ? दस आदमी गवाह है—रामगुलाम पण्डित, राजाराम गगापुत्र, धाखे महाब्राह्मन "

मैंने कहा, "यह अदालत तो है नही। जो नही आना चाहता, उसे दूसरे मजबूर नहीं कर सकते।" मन्नी पण्डित की दशा मुझे मालूम थी। वह कुलीन कान्यकुब्ज हैं। लेकिन उनकी बहन प्राय बीस साल की हो गयी थी, कोई ब्याह नही करता था, कारण, वह गगापुत्रो के यहा यजन करते थे, उनका धान्य लेते थे। मन्नी के लिए दूसरा उपाय जीविका का न था।

मैंने कहा, 'आप घबराइए नही। आपका काम हो जायगा।"

कुल्ली की स्त्री ने आश्वास की सास ली। कहा, 'अब आप ही नाग है।" कहकर, कृत्रिम करुणा मे जैसे कण्ठावरोध हो गया—आखो मे आँसू आ गये हो—आचल एक दफा आखो पर फेर लिया। फिर जोश मे आकर बोली, "बिना आपके गये वह न आयेंगे। आप ऐसे ही कहिएगा कि "

"मैं समझ गया', मैंने कहा, 'मेरी वहा जरूरत नही। नहाकर मैं यहीं आता हूँ। तब तक आप एक दफा पण्डित को और बुला भेजें। मैं अभी आता हूँ। वह न आयेंगे, तो मैं हवन करा दूगा।"

कुल्ली की स्त्री को जान पड़ा, साक्षात वशिष्ठजी उनके घर जा रहे हैं।

मैं ससुराल की तरफ लौटा। रास्ते में ज्योतिषीजी का मकान है। यह वही ज्योतिषी हैं जिन्होंने मेरा विवाह विचारा था, मैं मंगली था ससुरजी इनकार कर रहे थे, लेकिन इनके पिता वहाँ के बृहस्पति थे—राना साहब राजा साहब, लाल साहब सब उन्हें मानते थे, अब भी उनके लड़के को मानते हैं—उन्होंने कहा, विवाह बहुत अच्छा है, अगर लड़की को कुछ हो जायगा, तो बुरा नहीं, फिर जहाँ लड़का मंगली है, वहाँ लड़की राक्षस है, पटरी अच्छी बैठती है। तब से इस खानदान पर मेरी एक सी श्रद्धा चली आती है। ज्योतिषीजी मुझसे बड़े हैं। प्रणाम कर मैंने तिथि और संवत वगैरा पूछा। ज्योतिषीजी चौंके। मैं किस ठाट और कोटि का आदमी हूँ, जानते हैं। पूछा, "क्या करोगे? तुम और तिथि?'

मैंने कहा, "मानी पण्डित बहन के ब्याह के डर से कुल्ली के घर नहीं जाना चाहते। हवन कराऊँगा। 'मासाना मासोत्तम' तो हर महीने आप लोग कहते हैं। संकल्प में तिथि जान लेना जरूरी है।'

पण्डितजी ने पूछा, 'हवन कैसे कराओगे? क्या तुम यह सब जानते हो?'

"जानता तो दरअसल कुछ नहीं', मैंने कहा, "लेकिन यह जानता हूँ कि हवन में ब्रह्म से लेकर देव दानव यक्ष रक्ष, नर किन्नर, सबमें चतुर्थी लगती है, बाद स्वाहा' और इतनी संस्कृत मुझे आती है कि कुल बातें अपनी रची संस्कृत में करूँ, यहाँ के पण्डितों से भिया शुद्ध होगी, क्या कहते हैं?"

पण्डितजी ने कहा, हाँ, यह तो है।'

'अच्छा, पचांग दीजिए।" मैंने कहा, जल्दी है।"

पचांग लेकर ससुराल गया। मेरे हाथ में देशी जूता देखकर सासुजी को उतना आश्चर्य न होता, जितना पचांग देखकर हुआ। पूछा, 'यह क्या है भैया?

पचांग।' मैंने कहा, "चौकी और घड़ा भर पानी रखा दीजिए,

जल्दी है, नहा लू ।"

"क्या है ?" सासुजी ने आश्चर्य से पूछा ।

"मन्नी पण्डित कुल्ली के एकादशाह को नही गये, सपिण्डी कुल्ली की स्त्री ने ले ली है, इसलिए, कहते है, एक तो यो ही गगापुत्रा की पुरोहिती के कारण लोग पानी पीते डरते हैं, फिर तो वहन वठी ही रह जायगा।" पचाग रखकर मैं कपडे उतारने लगा ।

शकित होकर सासजी ने कहा, "तो तुम यह सब क्या जानो ?"

"मैं जानता हूँ।" मैंने कहा ।

"तो तुम वहा पुरोहिती करने जाओगे ?"

"हा, और एक जोडा जनऊ निकाल लीजिए, पहन लू नहाकर ।"

सासुजी घबरायी । कहा, "बच्चा, तुम हम मेटोगे !"

"क्यो ?" चौकी की ओर चलते हुए पूछा ।

'ऐसे कि लोग हमारे यहा का खान-पान छोडेंगे ।"

मैंने कहा, "मैं आपका ससुर हू या अजियाससुर ?" मेरे पापा का फल आपको क्यो भुगतना पडेगा, मेरा दिया हुआ पिण्ड-पानी जबकि आपको नही मिल सकता ? आप मुझे चौके मे न खिलाइए, बस ।"

सासुजी रोने लगी । मैं नहाने लगा । नहाकर जनऊ पहना । कहा, "मैं जनेऊ नही पहनता, यहावाले जानते थे । तभी यहा का खान-पान छोड दिया होता । मै डागिया को जानता हूँ ।"

नहाकर कपडे पहने । चलने को हुआ, तो सासुजी का जैसे होश हुआ । बोली, "खाय जाओ ।"

मैंने कहा, "लौटकर खाऊँगा ।"

'नही", सासुजी ने कहा, 'तुम वहा खा लोगे !" अपनी बहू से कहा "गुट्टो, परस तो जल्दी ।"

जल्दी जल्दी भोजन कर मैं निकला । देखता हू, चारो ओर से लोगो का तांता बँधा है – सब कुल्ली के घर जा रहे ह । १९३७ ई० मे काफी प्रसिद्ध हो चुका था, कुछ प्राचीन भी, ४० पार कर चुका था । एकादशाह कराने जा रहा हूँ, वहाँ के जीवन मे सबसे बडा आश्चर्य था ।

कुल्ली के घर मे आदमी नही अँट रहे थे । सबमे कौतूहल की

दृष्टि। कुल्ली की स्त्री में भी वैसी ही श्रद्धा। वह समझती थी, मैं कृताथ हो गयी। लोग मुझे देखकर नमा नमाकर काना फूसी करने लगते थे। बहुतों को यह शका थी, यह कैसे करायेंगे। मैं निश्चिन्त था। मुख देखकर लोगों को विश्वास हो जाता था।

यथासमय मैं आसन में जाकर बैठा। सामने हाथ जोड़कर कुल्ली की स्त्री बैठी। लोग कोई खड़े, कोई बैठे। कोई भीतर, कोई बाहर। मैं चौक पूरने लगा। सुरवधी लड़कपन में बहुत खेल चुका था। वैसा ही एक चौकोर घेरा बनाया। लेकिन जानता था कि नौ कोठे नवग्रहों के बनते हैं, बनाये। बालू की वेदी पर हवन की लकड़ी रक्खी। घट में स्वस्तिका बनायी। सामने गौर रक्खी। घट का दिया जलाया।

मन्त्र पढ़ते वक्त बार बार अटकता था, क्योंकि पण्डिताऊ स्वर नहीं निकल रहा था। कुछ देर सोचता रहा, व्रजभाषा-काल में हूँ, सूरदास का सूरसागर और तुलसीदास की रामायण पढ़ रहा हूँ। अपने आप वैसा ही मनोमण्डल बन गया। फिर क्या अपनी संस्कृत शुरू की। सकल्प, गणेश-पूजन गौरी पूजन, घट की प्राण प्रतिष्ठा करने लगा। लोग प्रभावित हो गये। खड़े जो जैसे रहे, रह गये, जैसे कवि सम्मेलन में कविता पढ़ने वक्त होता है। पूजन कराकर, हवन कराने लगा, उँगली के पोरों में सख्या रख रहा हूँ। दिखाता हुआ। घी मेरे पास था, साकल्य कुल्ली की स्त्री के पास। कुछ जाने पहचाने नाम तो लिये, फिर जो जीभ के सामने आया, उसी के पीछे चतुर्थी छोड़कर 'स्वाहा' कहने लगा। वह दिया था मेरे कहने के बाद कुल्ली की स्त्री स्वाहा कहती थी। हवन में जितनी देर लगती है लगी। देखनेवाले अब तक पूर्ण रूप से आश्वस्त और विश्वस्त हो गये थे। पीछे की गर्द झाड़कर उठ उठ चलने लगे थे। कुछ सहनशील बैठे हुए थे।

हवन पूरा हो जाने पर साल भर ब्रह्मचर्य के साथ पति की क्रिया करते रहने की प्रतिज्ञा करायी, यहाँ भी अपनी ही संस्कृत थी— मैं प० पयवारीदीन की धर्मपत्नी की संस्कृत उपस्थित लोगों ने प्राय सभी समझें। सुनकर मुस्किराये। एक छोर से दूसरे छोर तक दौड़ी इस मुस्कान के भीतर मैंने कुल्ली की एकादशाह क्रिया समाप्त की। यजमान

को आशीर्वाद देकर सीधा भेज दन के लिए कहा, और बाहर निकला।

बाहर निकल रहा था कि आलोचना सुन पडी, "सब ठीक हुआ। बन गयी कुल्ली की।'

खाँसकर गम्भीर मुद्रा से मैं ससुराल की तरफ बटा।

शाम को कुल्ली के यहाँ म सीधा आया। मैंने सासुजी से कहा, "रखा लीजिए। आप लोग इसम से कुछ न लीजिए। कल पूडी बना दीजिएगा।"

देखकर सासुजी न कहा, "एक दफे मे तुम्हारे खाय न खाया जायगा, इतना घी है।" मैं गम्भीर होकर रह गया।

दूसरे दिन सवरे, जैसी आदत थी, चिकवे के यहा से गाश्त ले आया। देखकर सासुजी न कहा, "भया, तुम ता आज पूडी खान के लिए कहते थे।'

मैंन कहा, "कुल्ली की स्त्री पहले मुसलमानिन थी, इसलिए प्रकृति ने उनके मस्कारा के अनुसार मुझे गाश्त खाने के लिए प्रेरित किया है। इसम दोप नहीं।"

●●●

उपन्यास